idara

अर्रहीक़ुल मख़्तूम

सीरत-ए-नबवी ﷺ

पर दुनिया भर में अव्वल ईनाम याफ़्ता किताब

मौलाना सफ़िय्युर्रहमान मुबारकपुरी

अर्रहीक़ुल मख़्तूम

सीरत-ए-नबवी ﷺ

पर दुनिया भर में अव्वल ईनाम याफ़्ता किताब

मौलाना सफ़िय्युर्रहमान मुबारकपुरी

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
किताब का परिचय	19
आत्म-कथा	27
इस किताब के बारे में	33
इस्लाम के प्रारम्भ में अरब की स्थिति	**37-102**
अरब-भूभाग और क़ौमें	39
अरब जातियां	40
अरब हुकूमतें और सरदारियां	55
यमन की बादशाही	55
हिम्य की बादशाही	59
शाम (सीरिया) की बादशाही	62
हिजाज़ की सरदारी	62
बाक़ी अरब सरदारियां	73
सामाजिक स्थिति	74
अरब के दीन और धर्म	77
इब्राहीमी दीन में क़ुरैश की बिदअतें	85
धार्मिक स्थिति	90
जाहिली (अज्ञानता पूर्ण) समाज की कुछ झलकियां	**93**
सामूहिक परिस्थिति	93
आर्थिक स्थिति	98
चरित्र आचरण	99
नुबूवत का वंश, जन्म और पवित्र जीवन	**103-135**
नुबूवत का वंश	**105**
वंश	105
परिवार	107
1. हाशिम	107
2. अब्दुल मुत्तलिब	108
ज़म-ज़म के कुएं की खुदाई	110
फ़ील (हाथी) की घटना	111
अब्दुल्लाह अल्लाह के रसूल सल्ल० के माता-पिता	114

जन्म और पवित्र जीवन के चालीस साल 117
जन्म 117
रूनी सद में 118
सीने के चाक होने की घटना 122
माँ की मुहब्बत भरी गोद में 123
दादा की मुहब्बत की छाया तले 123
मेहरबान चाचा की देख-रेख में 124
मुबारक चेहरे से वर्षा की तलब 125
बुहैरा राहिब (सन्यासी) 125
फुज्जार की लड़ाई 127
हिलफुल फुज़ूल 127
मेहनत की ज़िन्दगी 128
हज़रत खदीजा (रज़ि०) से शादी 129
काअबे का निर्माण और हजरे अस्वद के झगड़े का फैसला 130
नुबूवत से पहले के (हज़रत मुहम्मद सल्ल०) हालात 133
नुबूवत का युग और मक्का की पाक ज़िन्दगी 137-357
दावत के दौर और मरहले 138
नुबूवत और रिसालत की छाव में 139
हिरा नामी गुफ़ा के भीतर 139
जिब्रील वह्य लाते हैं 140
वह्य रुकी रही 146
जिब्रील दोबारा वह्य लाते हैं 147
वह्य की क़िस्में 148
तब्लीग़ का हुक्म और उससे मुताल्लिक़ बातें 151
पहला मरहला--तब्लीग़ (प्रचार) की कोशिश 157
खुफ़िया दावत के तीन साल 157
इस्लाम के शुरू के लोग 157
नमाज़ 160
क़ुरैश को मामूली ख़बर 161
दूसरा मरहला--खुली तब्लीग़ 163
खुल कर दावत देने का पहला हुक्म 163
रिश्तेदारों में तब्लीग [illegible]

सफ़ पर्वत पर 165
हक़ का खुले आम एलान और मुश्रिकों की प्रतिक्रिया 167
कुरैश का प्रतिनिधि-मण्डल अबू तालिब की सेवा में 169
हाजियों को रोकने के लिए मजिलिसे शूरा 170
मोर्चा-बन्दी के अलग-अलग तरीके 172
1. हंसी-ठट्ठा, तुच्छ समझना और मज़ाक उड़ाना 172
2. मोर्चा-बन्दी की दूसरी शक्ल 174
3. मोर्चा-बन्दी की तीसरी शक्ल 175
4. मोर्चा-बन्दी की चौथी शक्ल 177
ज़ुल्म और ज़्यादती 178
दारे अरक़म 191
हब्शा की पहली हिजरत 192
हब्शा की दूसरी हिजरत 197
हब्शा के मुहाजिरों के खिलाफ़ कुरैश की साज़िश 197
अबू तालिब को कुरैश की धमकी 203
कुरैश एक बार फिर अबू तालिब के सामने 204
नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हत्या का प्रस्ताव 205
हज़रत हमज़ा (रज़ि०) का इस्लाम कुबूल करना 210
हज़रत उमर (रज़ि०) का इस्लाम कुबूल करना 212
कुरैश का प्रतिनिधि अल्लाह के रसूल सल्ल० के हुज़ूर में 221
अबू तालिब बनी हाशिम और बनी अब्दुल मुत्तलिब को जमा करते हैं 225
पूर्ण बहिष्कार **227**
ज़ुल्म व सितम का वचन 227
तीन साल घाटी अबू तालिब में 228
लेख फाड़ दिया जाता है 230
अबू तालिब की सेवा में कुरैश का आख़िरी प्रतिनिधि-मण्डल **235**
ग़म का साल **239**
अबू तालिब की वफ़ात 239
हज़रत ख़दीजा मौत की गोद में 241
दुख ही दुख 242
हज़रत सौदा (रज़ि०) से शादी 244
शुरू के मुसलमानों का सब्र और जमाव और उसकी वजहें **245**
1. एक अल्लाह पर ईमान 245

2. आकर्षित करने वाला नेतृत्व 246
3. ज़िम्मेदारी का एहसास 251
4. आख़िरत पर ईमान 251
5. इन्हीं ख़तरों भरे और अंधेरों भरे हालात में 252
6. सफ़लता की शुभ सूचनाएं 254

तीसरा मरहला—मक्का के बाहर इस्लाम की दावत 261

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तायफ़ में 261

क़बीलों और व्यक्तियों को इस्लाम की दावत 271

वे क़बीले जिन्हें इस्लाम की दावत दी गयी 271
1. बनू कल्ब 272
2. बनू हनीफ़ा 272
3. आमिर बिन सआस्आ 272

ईमान की किरणें मक्के से बाहर 273
1. सुवैद बिन सामित 274
2. इयास बिन मुआज़ 274
3. अबू ज़र ग़िफ़ारी रज़ियल्लाहु अन्हु 275
4. तुफ़ैल बिन अम्र दौसी 278
5. ज़िमाद अज़दी (रज़ि०) 280

यसरिब की छः भाग्यवान आत्माएं 281

हज़रत आइशा (रज़ि०) से निकाह 284

इसरा और मेराज 285

अक़बा की पहली बैअ़त 297

मदीना में इस्लाम का दूत 299

महान सफ़लता 299

अक़बा की दूसरी बैअ़त 305

बातचीत की शुरुआत और हज़रत अब्बास (रज़ि०) की..... 307

बैअ़त की धाराएं 308

बैअ़त की ख़तरनाकी की दोबारा याद देहानी 310

बैअ़त पूरी हुई 312

बारह नक़ीब (चोबदार) 313
1. ख़ज़रज के नक़ीब 313
2. औस के नक़ीब 314

समझौता खोल देता है 314

कुरैश पर चोट लगाने के लिए अंसार की मुस्तैदी	315
यसरिब के सरदारों से कुरैश का विरोध	315
खबर का संकीर्न और बेइज़्ज़त करने वालों का पीछा	316
हिजरत के हरावल दस्ते (टुकड़ियां)	**319**
कुरैश की पार्लियामेंट "दारुन्नदवा" में	**325**
शैतानी चालें और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कत्ल.....	327
नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिजरत	**331**
अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मकान का घेराव	332
अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपना घर छोड़ते हैं	334
घर से गुफ़ा तक	336
गुफ़ा में	337
कुरैश की दौड़-धूप	339
मदीना के रास्ते में	340
क़ुबा में तशरीफ़ लाए	350
मदीना में दाख़िला	353
पाक जीवन का मदनी दौर (युग)	**359-944**
हिजरत के वक़्त मदीना के हालात	**361**
पहला मरहला— नये समाज का गठन	**375**
मस्जिदे नबवी का निर्माण	375
मुसलमानों में भाई चारा	377
इस्लामी सहयोग का जज़्बा	380
समाज पर इन चीज़ों का असर	383
यहूदियों के साथ समझौता	388
समझौते की धाराएं	389
सशस्त्र संघर्ष	**391**
हिजरत के बाद मुसलमानों के ख़िलाफ़ कुरैश की चालें	391
मुसलमानों पर मस्जिदे हराम का दरवाज़ा बन्द किए जाने का एलान	393
मुहाजिरों को कुरैश की धमकी	393
लड़ाई की इजाज़त	395
सरायाः और ग़ज़वात (झगड़े और लड़ाइयां)	397
सरिय्या-ए-सैफ़ुल बहर	398
2. सरिय्या-ए-रावित्ग़	398
3. सरिय्या-ए-ख़र्रार	399

4. ग़ज़वा-ए-अबवा या वद्दान
5. ग़ज़वा-ए- बुवात
6. ग़ज़वा-ए-सफ़वान
7. ग़ज़वा-ए-ज़ुल उशैरा
8. सरिय्या-ए-नख़ला

बद्र का महान ग़ज़वा-----इस्लाम की पहली निर्णायक जंग

ग़ज़वे की वजह
इस्लामी सेना की संख्या और कमान का बंटवारा
बद्र की ओर इस्लामी सेना का कूच
मक्का में ख़तरे का एलान
लड़ाई के लिए मक्का वासियों की तैयारी
मक्की सेना की तादाद
बनू बक्र के क़बीलों का मसअला
मक्की सेना का कूच
क़ाफ़िला बच निकला
मक्की सेना का वापसी का इरादा और आपसी फूट
इस्लामी सेना के लिए हालात की नज़ाकत
मज्लिसे शूरा का गठन
इस्लामी सेना का बाक़ी सफ़र
जासूसों का कदम
मक्का की फ़ौज के बारे में अहम जानकारी का हासिल होना
रहमत की वर्षा
महत्वपूर्ण सैनिक केन्द्रों की ओर इस्लामी सेना आगे बढ़ी
नेतृत्व का केन्द्र
सेना की तर्तीब और रात गुज़ारना
लड़ाई के मैदान में मक्की सेना का आना और उनका आपसी मतभेद
दोनों फ़ौजें आमने-सामने
शून्य-बिन्दी और लड़ाई का पहला ईंधन
आग भड़क उठी
भीड़ टूट पड़ी
अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दुआ
फ़रिश्तों का आना
जवाबी हमला

मैदान से इब्लीस का भागना
कड़ी हार
अबू जहल की अकड़
अबू जहल का क़त्ल
ईमान के चमकते दृश्य
दोनों फ़रीक़ के मारे गए लोग
मक्का में हारने की ख़बर
मदीना में विजय की शुभ सूचना
ग़नीमत के माल का बटवारा
इस्लामी सेना मदीना के रास्ते में
नुबरुब्बाद देने वाले प्रतिनिधि-मण्डल
क़ैदियों का मामला
क़ुरआन की समीक्षा
विभिन्न घटनाएं
बद्र के बाद की जंगी गतिविधियां
1. कुद्र नामी स्थान पर ग़ज़वा ए बनी सुलैम
2. बनी सअ्लबा बिन सुलैमी व मुहारिब की हत्या का अभियान
3. ग़ज़वा ए बनी क़ैनुक़ाअ
यहूदियों की एकतरफ़ा का एक नमूना
बनू क़ैनुक़ाअ का नगर भंग करना
पैग़म्बर, सरकार और देश निकाला
4. ग़ज़वा ए सवीक़
5. ग़ज़वा-ए-ज़ी अमर
6. कअ़ब बिन अशरफ़ की हत्या
7. ग़ज़वा-ए-बहरान
8. सरिय्या ज़ैद बिन हारिसा
ग़ज़वा-ए-उहद
बदला लेने की लड़ाई के लिए क़ुरैश की तैयारियां
क़ुरैश की फ़ौज, लड़ाई का सामान और कमान
मक्का की सेना का रवाना होना
मदीना में सूचना
इस्लामी स्थिति की मुक़ाबले की तैयारी
मक्की सेना मदीना के दामन में

मदीना की रक्षा-नीति के लिए मज्लिसे शूरा की मीटिंग
इस्लामी सेना की तर्तीब और लड़ाई के मैदान के लिए रवाना होना
सेना का मुआयना
उहद और मदीना के बीच रात गुज़ारना
अब्दुल्लाह बिन उबई और उसके साथियों की सरकशी
बाक़ी इस्लामी फ़ौज उहद के दामन में
प्रतिरक्षात्मक योजना
अल्लाह के रसूल सल्ल० सेना में वीरता की रूह फूंकते हैं
मक्की सेना का गठन
क़ुरैश की राजनीतिक चालबाज़ी
जोश और हिम्मत दिलाने के लिए क़ुरैशी औरतों की बेपनाह कोशिशें
लड़ाई का पहला ईंधन
लड़ाई का केन्द्र-बिन्दु और झंडा बरदारों का सफ़ाया
बाक़ी हिस्सों में लड़ाई की स्थिति
अल्लाह के शेर हज़रत हमज़ा (रज़ि०) की शहादत
मुसलमानों ही का पल्ला भारी रहा
औरत की गोद से तलवार की धार पर
तीर-अंदाज़ों का कारनामा
मुश्रिकों की हार
तीर-अंदाज़ों की भयानक ग़लती
इस्लामी सेना मुश्रिकों के घेरे में
अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ख़तरे भरा.....
मुसलमानों में बिखराव
अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के चारों ओर ख़ूनी लड़ाई
अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास सहाबा (रज़ि०) के इकट्ठा.....
मुश्रिकों के दबाव में बढ़ोतरी
अपूर्व वीरता
नबी (सल्ल०) के शहीद होने की ख़बर और लड़ाई पर इस का प्रभाव
अल्लाह के रसूल सल्ल० की निरंतर युद्ध सज्जा और हालात पर क़ाबू
उबई बिन ख़लफ़ की हत्या
हज़रत तलहा (रज़ि०) नबी (सल्ल०) को उठाते हैं
मुश्रिकों का आख़िरी हमला
शहीदों का ग़ुस्ला

आख़िर तक लड़ाई लड़ने के लिए मुसलमानों का मुसौदे 553
घाटी में क़रार पाने के बाद 555
अबू सुफ़ियान की बद-तमीज़ी और हज़रत उमर (रदि०) से दो-दो बातें 556
बद्र में एक और लड़ाई लड़ने की बात 558
मुश्रिकों के दृष्टिकोण की जांच 558
शहीदों और घायलों की ख़बरगीरी 559
अल्लाह के रसूल (सल्ल०) अल्लाह तआला की हम्द व सना..... 564
मदीना की वापसी, मुहब्बत करने और जान क़ुर्बान देने की अनोखी घटनाएं 565
अल्लाह के रसूल (सल्ल०) मदीना में 567
मदीना में हंगामी हालत 568
ग़ज़वा-ए-हमरा-उल अस्द 569
ग़ज़वा-ए-उहुद में जीत और हार का एक विश्लेषण 574
इस लड़ाई पर क़ुरआन की समीक्षा 576
लड़ाई में काम कर रहे अल्लाह के मकसद और हिकमतें 578
उहुद के बाद की फ़ौजी मुहिमें **581**
1. सरिय्या अबू सलमा (रदि०) 582
2. अब्दुल्लाह बिन अनैस (रदि०) की मुहिम 583
3. रजीअ की घटना 584
4. बीरे मऊना की दुर्घटना 587
5. ग़ज़वा-ए-बनी नज़ीर 591
6. ग़ज़वा-ए-नज्द 597
7. ग़ज़वा-ए-बद्र (द्वितीय) 599
8. ग़ज़वा-ए दूमतुल जन्दल 601
ग़ज़वा-ए-अहज़ाब **603**
ग़ज़वा-ए-बनू क़ुरैज़ा **627**
ग़ज़वा-ए-अहज़ाब और क़ुरैज़ा के बाद की जंगी मुहिमें **639**
1. सलाम बिन अबिल हुक़ैक़ की हत्या 639
2. सरिय्या मुहम्मद बिन मसलमा 642
3. ग़ज़वा-ए-बनू लहयान 644
4. सरिय्या ग़मर 645
5. सरिय्या ज़ुल क़िस्सा (1) 646
6. सरिय्या ज़ुल क़िस्सा (2) 646
7. सरिय्या जमूम 646

8. सरिय्या ईस 647
9. सरिय्या तर्फ व तुर्फ 648
10. सरिय्या वादियुल क़ुरा 649
11. सरिय्या ख़बत 649
ग़ज़वा-ए-बनिल मुस्तलिक़ या ग़ज़वा-ए-मुरैसीअ 651
ग़ज़वा-ए-बनिल मुस्तलिक़ में मुनाफ़िक़ों का रवैया 654
ग़ज़वा-ए-बनिल मुस्तलिक़ में मुनाफ़िक़ों का रोल 661
1. मदीना से सब से कमीने आदमी को निकालने की बात 662
2. इफ़्क़ की घटना 665
ग़ज़वा-ए-मुरैसीअ के बाद की फ़ौजी मुहिमें 673
1. सरिय्या दयारे बनी कलब, इलाक़ा दूमतुल जन्दल 673
2. सरिय्या दयारे बनी साद, इलाक़ा फ़िदक 673
3. सरिय्या वादियुल क़ुरा 674
4. सरिय्या उरनिय्यीन 675
हुदैबिया का समझौता 679
हुदैबिया के सफ़र की वजह 679
मुसलमानों में रवाना होने का एलान 680
मक्का की ओर मुसलमानों की हरकत 680
बैतुल्लाह से मुसलमानों को रोकने की कोशिश 681
ख़ूनी टकराव से बचने की कोशिश और रास्ते की तब्दीली 682
बुदैल बिन वरक़ा का मामला 683
क़ुरैश के दूत 684
वही है जिसने उनके हाथ तुम से रोके 687
हज़रत उस्मान (रज़ि०) दूत बना कर भेजे गये 687
हज़रत उस्मान (रज़ि०) के शहीद किए जाने की अफ़वाह..... 688
समझौता और उसकी धाराएं 690
अबू जन्दल (रज़ि०) की वापसी 692
उमरा से हलाल होने के लिए क़ुर्बानी और बालों की कटाई 693
हिजरत करने वाली औरतों की वापसी से इंकार 694
इस समझौते की धाराओं का हल 695
मुसलमानों का ग़म और हज़रत उमर का वाद-विवाद करना 699
कमज़ोर मुसलमानों का मसअला हल हो गया 701
क़ुरैशी भाइयों का इस्लाम क़ुबूल कर लेना 703

दूसरा मरहला—नयी तबदीली 705
बादशाहों और सरदारों के नाम पत्र 707
1. नज्जाशी शाहे हबश के नाम पत्र 708
2. मुक़ौक़िस शाहे मिस्र के नाम पत्र 713
3. शाहे फ़ारस ख़ुसरू परवेज़ के नाम पत्र 716
4. क़ैसर शाहे रूम के नाम पत्र 718
5. मुंज़िर बिन सावी के नाम पत्र 725
6. हौज़ा बिन अली रासिदे यमामा के नाम पत्र 726
7. हारिस बिन अबी शिम्र ग़स्सानी हाकिमे दमिश्क़ के नाम पत्र 727
8. शाहे उमान के नाम पत्र 728
हुदैबिया समझौते के बाद की सैनिक गतिविधियां 735
ग़ज़वा-ए-ग़ाबा या ज़ी क़र्द 735
ग़ज़वा-ए-ख़ैबर और ग़ज़वा-ए-वादिउल क़रा 739
ख़ैबर के लिए कूच करना 740
इस्लामी सेना की तादाद 741
यहूदियों के लिए मुनाफ़िक़ों की साज़िशें 742
ख़ैबर का रास्ता 743
रास्ते की कुछ घटनाएं 744
इस्लामी फ़ौज ख़ैबर के दामन में 746
लड़ाई की तैयारी और ख़ैबर के क़िले 748
लड़ाई की शुरुआत और नाइम क़िले पर विजय 749
सअ्ब बिन मुआज़ के क़िले की विजय 752
ज़ुबैर के क़िले की विजय 753
उबई के क़िले की विजय 754
क़िला नज़ार की विजय 754
ख़ैबर के दूसरे आधे पर भी विजय 755
समझौते की बातचीत 756
अबुल हुक़ैक़ के दोनों बेटों की वायदा ख़िलाफ़ी और उनका क़त्ल 757
ग़नीमत के माल का बांटा जाना 759
हज़रत जअ्फ़र बिन अबू तालिब और अशअरी सहाबियों का आना 760
हज़रत सफ़िय्या से शादी 762
विष में सनी बकरी की घटना 763

ख़ैबर की लड़ाई में दोनों फ़रीक़ों के मारे गए लोग	764
फ़िदक	765
वादियुल क़ुरा	765
तैमा	767
मदीना की वापसी	768
सरिय्या अबान बिन सईद	769
ग़ज़वा-ए-ज़ातुर्रिक़ाअ	**771**
वर्ष 07 हि० के कुछ और सरायां	776
1. सरिय्या क़दीद	776
2. सरिय्या हस्मी	777
3. सरिय्या तुर्बा	777
4. सरिय्या अतराफ़े फ़िदक	777
5. सरिय्या मीफ़आ	777
6. सरिय्या ख़ैबर	778
7. सरिय्या यमन व जबार	778
8. सरिय्या ग़ाबा	779
उमरा-ए-क़ज़ा	**781**
कुछ और सरायां	786
1. सरिय्या अबुल औजा	786
2. सरिय्या ग़ालिब बिन अब्दुल्लाह	786
3. सरिय्या ज़ाते अतलह	786
4. सरिय्या ज़ाते इर्क़	787
मअ़रका-ए-मूता	**789**
मअ़रके की वजह	789
सेना के अधिकारियों और अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की वसीयत	790
इस्लामी सेना का रवाना होना और हज़रत अब्दुल्लाह बिन रवाहा का सेना	791
इस्लामी सेना का आगे बढ़ते रहना और अचानक आने वाली.....	792
मआन में मंत्रणा	792
दुश्मन की ओर इस्लामी सेना का आगे बढ़ना	793
लड़ाई की शुरुआत और सेनापतियों का.....	793
ख़ालिद, अल्लाह की तलवारों में से एक तलवार के हाथ में	796
लड़ाई का अंत	797
दोनों फ़रीक़ के क़त्ल किए गए लोग	798

इस मअ़रके का प्रभाव 798
सरिय्या ज़ातुस्सलासिल 799
सरिय्या ख़िज़रा 801
ग़ज़वा-ए-फ़त्हे मक्का 803
इस ग़ज़वे की वजह 803
समझौते की तजदीद (नवीनीकरण) के लिए..... 806
ग़ज़वे की तैयारी और छिपाने की कोशिश 810
इस्लामी सेना मक्का के रास्ते में 813
मर्रज़्ज़हरान में इस्लामी सेना का पड़ाव 815
अबू सुफ़ियान नबी (सल्ल०) के दरबार में 816
इस्लामी सेना मर्रज़्ज़हरान से मक्का की ओर 819
इस्लामी सेना अचानक क़ुरैश के सर पर 821
इस्लामी सेना ज़ी तुवा में 822
मक्का में इस्लामी सेना का प्रवेश 823
मस्जिदे हराम में अल्लाह के रसूल (सल्ल०) का दाख़िला..... 825
ख़ाना-ए-काबा में अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की नमाज़..... 827
आज कोई पकड़ नहीं 828
कअ़बे की कुंजी 828
कअ़बे की छत पर अज़ाने बिलाली 829
जीत या शुक्राने की नमाज़ 829
बड़े मुजरिमों का ख़ून बेकार क़रार दिया गया 830
सफ़वान बिन उमैया और फ़ुज़ाला बिन उमैर का..... 832
विजय के दूसरे दिन अल्लाह के रसूल (सल्ल०) का ख़ुत्बा 833
अंसार के अंदेशे 835
बैअ़त 836
मक्का में नबी (सल्ल०) का ठहरना और काम 837
सराया और प्रतिनिधि-मण्डल 837
तीसरा मरहला 842
ग़ज़वा-ए-हुनैन 843
दुश्मन का कूच करना और औतास में पड़ाव 843
युद्ध विशेषज्ञ की ज़ुबानी सेनापति की ग़लती निकाली गयी 844
दुश्मन के जासूस 845
अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के जासूस 845

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) मक्का से हुनैन की तरफ़ 846
इस्लामी सेना पर तीरअंदाज़ों का अचानक हमला 847
दुश्मन की ज़बरदस्त हार 850
पीछा किया जाना 851
ग़नीमत 852
ग़ज़वा-ए-तायफ़ 853
जिइर्राना में ग़नीमत के माल का बटवारा 856
अंसार का दुख और बेचैनी 858
हवाज़िन के प्रतिनिधि-मण्डल का आना 861
उमरा और मदीना को वापसी 862
मक्का-विजय के बाद के सराया और ज़िम्मेदारों का रवाना किया जाना 865
ज़कात वसूल करने वाले 865
सराया 867
1. सरिय्या उयैना बिन हिस्न फ़ज़ारी 867
2. सरिय्या क़ुत्बा बिन आमिर 868
3. सरिय्या ज़हहाक बिन सुफ़्यान किलाबी 868
4. सरिय्या अलक़मा बिन मुजज़ज़ मुदलजी 869
5. सरिय्या अली बिन अबी तालिब(रज़ि०) 869
ग़ज़वा-ए-तबूक 873
ग़ज़वे की वजह 873
रूम व ग़स्सान की तैयारियों की आम ख़बरें 874
रूम व ग़स्सान की तैयारियों की ख़ास ख़बरें 877
हालात की नज़ाकत में बढ़ोतरी 877
अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की ओर से 878
रूमियों से लड़ाई की तैयारी का एलान 878
ग़ज़वे की तैयारी के लिए मुसलमानों की दौड़-धूप 879
इस्लामी सेना तबूक के रास्ते में 881
इस्लामी सेना तबूक में 884
मदीना को वापसी 886
पीछे रह जाने वाले 887
इस ग़ज़वे का असर 890
इस ग़ज़वे से मुतअल्लिक़ क़ुरआन का उतरना 891
इस वर्ष की कुछ अहम घटनाएं 892

हज सन् 09 हि० (हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) के नेतृत्व में) **893**
ग़ज़वात पर एक नज़र **895**
जत्थे के जत्थों का अल्लाह के दीन में दाख़िला **901**
प्रतिनिधि-मण्डल 903
1. अब्दुल क़ैस प्रतिनिधि मण्डल 903
2. दौस प्रतिनिधि-मण्डल 904
3. फ़र्वा बिन अम्र जुज़ामी का दूत 905
4. सदा प्रतिनिधि-मण्डल 905
5. कअब बिन ज़ुहैर बिन अबी सुलमा का आना 906
6. अज़रा प्रतिनिधि-मण्डल 910
7. बली प्रतिनिधि-मण्डल 910
8. सक़ीफ़ प्रतिनिधि-मण्डल 911
9. यमन के शाहों का पत्र 914
10. हमदान प्रतिनिधि-मण्डल 915
11. बनी फ़ज़ारा प्रतिनिधि-मण्डल 915
12. नजरान प्रतिनिधि-मण्डल 916
13. बनी हनीफ़ा प्रतिनिधि-मण्डल 919
14. बनी आमिर बिन सअसआ प्रतिनिधि-मण्डल 922
15. तजीब प्रतिनिधि-मण्डल 923
16. तई प्रतिनिधि-मण्डल 924
दावत की कामियाबी और असरात **927**
विदाई हज **931**
आख़िरी फ़ौजी मुहिम **943**
पाक ज़िन्दगी का आख़िरी अध्याय **945-995**
रफ़ीके अअ़ला की ओर **947**
विदाई निशानियां 947
मरज़ की शुरुआत 948
आख़िरी सप्ताह 948
वफ़ात से पांच दिन पहले 949
चार दिन पहले 95[illegible]
एक दिन या दो दिन पहले 954
एक दिन पहले 954
मुबारक ज़िंदगी का आख़िरी दिन 954

नज़अ की हालत 956
अथाह शोक 958
हज़रत उमर (रज़ि०) का मौक़िफ़ (दृष्टिकोण) 958
हज़रत अबू बक्र (रज़ि०) का मौक़िफ़ (दृष्टिकोण) 959
कफ़न-दफ़न और नमाज़े जनाज़ा 961
नबी (सल्ल०) का घराना 963
चरित्र व आचरण 979
मुबारक हुलिया 979
नफ़्स का गुण और चरित्र की श्रेष्ठता 986
ग्रंथ-सूची 997

RELIABLE SHOP
Badi Masjid (Markaz) Gali,
Ranitalav, SURAT-395003.
Mo. 98981-36436

RELIABLE SHOP
Badi Masjid (Mandvi) Gali,
Ranchalav, SURAT-395003.
Mo. 98981-36436

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

किताब का परिचय

الحمدلله والصلاة والسلام على رسول الله وعلى اله وصحبه ومن والاه اما بعد

यह रबीउल अव्वल सन् 1396 हि० (मार्च 1976 ई०) की बात है कि कराची में इस्लामी जगत की पहली सीरत कान्फ्रेंस (हज़रत मुहम्मद की जीवनी पर आधारित कान्फ्रेंस) हुई, जिस में राबिता-ए-आलमे इस्लामी मक्का मुकर्रमा ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया और इस कान्फ्रेंस के अन्त में सारी दुनिया के क़लमकारों को दावत दी कि वे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सीरत (चरित्र व आचरण) के विषय पर दुनिया की किसी भी जीवित भाषा में लेख लिखें। पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी और पांचवीं पोज़ीशन हासिल करने वालों को क्रमवार पचास, चालीस, तीस, बीस और दस हज़ार रियाल के इनाम दिए जाएंगे। यह एलान राबिता के सरकारी आर्गन अख़बारुल आलमिल इस्लामी के कई अंकों में छपा, लेकिन मुझे इस प्रस्ताव और एलान के बारे में समय पर जानकारी न हो सकी।

कुछ दिनों बाद जब मैं बनारस से अपने वतन (घर) मुबारकपुर गया तो मेरे फुफेरे भाई माननीय उस्ताद (गुरु) मौलवी अब्दुर्रहमान साहब मुबारकपुरी हफ़िज़हुल्लाह (इब्ने शेख़ुल हदीस मौलवी उबैदुल्लाह रहमानी साहब मुबारकपुरी हफ़िज़हुल्लाह) ने मुझ से इसका ज़िक्र किया और ज़ोर दिया कि मैं भी इस मुकाबले में हिस्सा लूं। मैंने अपनी

अज्ञानता और अनुभवहीनता की विवशता बताई, पर मौलावी साहब आग्रह करते रहे और बार-बार विवशता दिखाने पर फ़रमाया, कि मेरा उद्देश्य यह नहीं है कि इनाम मिले, बल्कि मैं चाहता हूं कि इसी "बहाने" एक "काम" हो जाए। मैं उनके बराबर आग्रह करने पर चुप तो हो गया, लेकिन नीयत यही थी कि इस मुक़ाबले में हिस्सा नहीं लूंगा।

कुछ दिनों बाद जमीअ़त अहले हदीस हिंद के आर्गन पन्द्रह रोज़ा 'तर्जुमान दिल्ली' में राबिता के इस प्रस्ताव और एलान का उर्दू अनुवाद छपा तो मेरे लिए एक अनोखी स्थिति पैदा हो गई। जामिया सलफ़िया के डिग्री और सेकेंड्री छात्रों में से आम तौर से जिस किसी से सामना होता, वह मुझे इस मुक़ाबले में शरीक होने की सलाह देता। सोचा कि शायद दुनिया के लोगों के ये बोल "अल्लाह का नक़्क़ारा" है, फिर भी मुक़ाबले में हिस्सा न लेने के अपने दिली फ़ैसले पर मैं लगभग अटल रहा, कुछ दिनों बाद छात्रों के "मश्वरे" और "तक़ाज़े" भी लगभग ख़त्म ही हो गये, पर कुछ छात्र अपने तक़ाज़े पर क़ायम रहे। कुछ ने लेख (पुस्तक) के स्वरूप को वार्ता का विषय बना रखा था और कुछ का उभारना तो आग्रह की सीमाओं को छू रहा था। अंत में बड़ी झिझक के बाद मैं तैयार हो गया।

काम शुरु किया, लेकिन थोड़ा-थोड़ा, कभी-कभी और धीमे तरीक़े से। चुनांचे अभी बिल्कुल शुरु ही हुआ था कि रमज़ान की बड़ी छुट्टी का वक़्त आ गया। इधर राबिता ने आने वाले मुहर्रमुल-हराम की पहली तारीख़ को लेखों के वसूल होने की आख़िरी तारीख़ तय किया था। इस तरह लेख पूरा करने के वक़्त में से साढ़े पांच माह गुज़र चुके थे और ज़्यादा से ज़्यादा साढ़े तीन महीने में लेख पूरा करके डाक के सुपुर्द कर देना ज़रूरी था, ताकि समय पर पहुंच जाए और इधर अभी सारा काम बाक़ी था। मुझे यक़ीन नहीं था कि इस थोड़ी सी मुद्दत में मुसव्वदा तैयार करना, उसे दोबारा देखना, नक़्ल करना और साफ़ करने का काम हो

सकेगा, पर आग्रह करने वालों ने चलते-चलते ताकीद की कि किसी तरह के ढीलेपन और डगमगाहट के बिना काम में जुत जाऊं। रमज़ान के बाद "सहारा" दिया जाएगा। मैंने भी फ़ुर्सत के दिनों को ग़नीमत समझा। क़लम को घोड़े की लगाम कसी, और मेहनत और छानबीन के भारी समुद्र में कूद पड़ा। पूरी छुट्टी सुहाने सपनों के कुछ क्षणों की तरह गुज़र गई। और ये लोग वापस पलटे तो लेख का दो तिहाई हिस्सा तैयार किया जा चुका था, चूंकि मुसव्वदे को दोबारा देखने का मौक़ा न था, इसलिए अस्ल मुसव्वदा ही इन लोगों के हवाले कर दिया कि नक़्ल व सफ़ाई और देख भाल का काम कर डालें। बाक़ी हिस्से की कुछ दूसरी ज़रूरी चीज़ों को जुटाने और तैयार करने में भी उनसे किसी हद तक सहयोग लिया। जामिया की ड्यूटी और गहमा-गहमी शुरू हो चुकी थी, इसलिए छुट्टियों के समय की रफ़्तार बाक़ी रखना सम्भव न था, फिर भी डेढ़ महीने बाद जब ईदे अज़्हा की छुट्टी का समय आया तो रतजगों की बरकत से लेख तैयारी के आख़िरी मरहले में था जिसे तेज़ी की एक छलांग ने आख़िर तक पहुंचा दिया और मैंने मुहर्रम के शुरू के बारह-तेरह दिन पहले यह लेख डाक के हवाले कर दिया।

महीनों बाद मुझे राबिता के दो रजिस्टर्ड पत्र 8-10 दिन आगे-पीछे वसूल हुए। खुलासा यह था कि मेरा लेख राबिता की मुक़र्रर की हुई शर्तों के मुताबिक़ है, इसलिए मुक़ाबले में शरीक़ कर लिया गया है। मैंने इत्मीनान की सांस ली।

इसके बाद दिन पर दिन बीतते गए, यहां तक कि डेढ़ साल की मुद्दत बीत गयी, मगर राबिता बिल्कुल चुप। मैंने दोबारा ख़त लिख कर मालूम करना भी चाहा कि इस सिलसिले में क्या हो रहा है तो भी चुप्पी न टूटी। फिर मैं ख़ुद अपने कामों और मस्अलों में उलझ कर यह बात लगभग भूल गया कि मैंने किसी "मुक़ाबले" में हिस्सा लिया है।

शाबान के शुरू में सन् 1398 हि० (6-7-8 जुलाई 1978) को

कराची (पाकिस्तान) में पहली कुल एशिया इस्लामी कांफ्रेंस आयोजित हो रही थी। मुझे उसकी कार्यवाहियों से दिलचस्पी थी। इसलिए उसके ताल्लुक़ से अख़बार के कोनों में दबी हुई ख़बरें भी ढूंढ कर पढ़ता था, एक दिन भदोही स्टेशन पर ट्रेन के इन्तिज़ार में-----जो लेट थी----- अख़बार देखने बैठ गया। अचानक एक छोटी सी ख़बर पर नज़र पड़ी कि इस कांफ्रेंस की किसी मीटिंग में राबिता ने "सीरत निगारी" (प्यारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जीवनी पर आधारित लेखों) के मुक़ाबले में कामियाब होने वाले पांच नामों का एलान कर दिया है और उन में एक लेख लिखने वाला भारतीय भी है। यह ख़बर पढ़ कर भीतर ही भीतर तलब बढ़ती रही। बनारस वापस आकर विस्तार से जानना चाहा, मगर कोई नतीजा न निकला।

10 जुलाई 1978 ई० को चाश्त के वक़्त----पूरी रात मुनाज़रा बजरडीहा की शर्तें तय करने के बाद बेख़बर सो रहा था कि अचानक कमरे से मिली सीढ़ियों पर छात्रों का शोर व हंगामा सुनाई पड़ा और आंख खुल गई। इतने में छात्रों का रेला कमरे के अंदर था। उनके चेहरों पर अथाह हर्ष के चिन्ह और ज़ुबानों पर मुबारकबादी के शब्द थे।

"क्या हुआ? क्या विरोधी ने मुनाज़रा करने से इंकार कर दिया?" मैंने लेटे ही लेटे पूछा?

"नहीं, बल्कि आप सीरतनिगारी (हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जीवनी पर आधारित लेख लिखने) के मुक़ाबले में प्रथम आ गए।"

"अल्लाह! तेरा शुक्र है! आप लोगों को यह बात कैसे मालूम हुई?" मैं उठ कर बैठ चुका था।

"मौलवी उज़ैर शम्स यह ख़बर लाए हैं।"

"मौलवी उज़ैर यहां आ चुके हैं?"

"जी हां।"

और कुछ क्षणों बाद मौलवी उज़ैर मुझे विस्तार में बता रहे थे।

फिर 22 शाबान सन् 1398 हि० (29 जलाई सन् 1978 ई०) को राबिता की रजिस्ट्री मिली, जिसमें कामियाबी की ख़बर के साथ खुशख़बरी भी लिखी थी कि मुहर्रम 1399 हि० को मक्का मुकर्रमा में राबिता के आफ़िस में पुरस्कार वितरण (इनाम की तक़सीम) के लिए एक प्रोग्राम होगा और इस में मुझे शरीक होना है। यह प्रोग्राम मुहर्रम के बजाए 12 रबीउल आख़िर 1399 हि० को हुआ।

इस प्रोग्राम की वजह से मुझे पहली बार हरमैन शरीफ़ैन (मक्का-मदीना) की ज़ियारत (दर्शन) का सौभाग्य प्राप्त हुआ। 10 रबीउल आख़िर, जुमेरात (बृहस्पतिवार) के दिन अस्र से कुछ पहले मुकर्रमा के नूर से चमचमाते माहौल में दाख़िल हुआ। तीसरे दिन साढ़े आठ बजे राबिता में हाज़िरी का हुक्म था। यहां ज़रूरी कार्यवाहियों के बाद लगभग दस बजे क़ुरआन पाक की तिलावत से प्रोग्राम शुरू हुआ। सऊदी न्यायालय के चीफ़ जस्टिस शैख़ अ़ब्दुल्लाह बिन हुमैद रह० सभा के अध्यक्ष थे। मक्का के नायब गवर्नर अमीर सऊद बिन अ़ब्दुल मोहसिन जो स्वर्गीय मलिक अ़ब्दुल अज़ीज़ के पोते हैं--------पुरस्कार बांटने के लिए तशरीफ़ रखते थे। उन्होंने संक्षिप्त भाषण दिया। उनके बाद राबिता के असिस्टेंट सेक्रेट्री जनरल शैख़ अ़ली अल-मुख़्तार ने सम्बोधित किया। उन्होंने किसी हद तक विस्तार से बताया कि यह इनामी मुक़ाबला क्यों हुआ? और फ़ैसले के लिए क्या कार्य-पद्धति अपनायी गयी। उन्होंने साफ़ किया कि राबिता को मुक़ाबले के एलान के बाद एक हज़ार से ज़्यादा (यानी 1182) लेख मिले, जिनके अलग-अलग पहलुओं का जायज़ा लेने के बाद आरंभिक कमेटी ने एक सौ तिरासी (183) लेखों को मुक़ाबले के लिए चुना और आख़िरी फ़ैसले के लिए उन्हें शिक्षा-मंत्री शैख़ हसन बिन अ़ब्दुल्लाह आल अश-शैख़ के नेतृत्व में क़ायम विशेषज्ञों की आठ सदस्यीय कमेटी के सुपुर्द कर दिया।

कमेटी के ये आठों सदस्य मलिक अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ यूनिवर्सिटी जद्दा की शाखा कुल्लीयतुश शरीआ: (और अब जामिया उम्मुल क़ुरा) मक्का मुकर्रमा के उस्ताद और सीरते नबवी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और इस्लामी तारीख़ के विशेषज्ञ हैं, इनके नाम ये हैं---

1. डा० इब्राहीम अ़ली शऊत,

2. डा० अहमद सरयैद दर्राज़,

3. डा० अ़ब्दुर्रहमान फ़हमी मुहम्मद,

4. डा० फ़ाइक़ बक्र सव्वाफ़,

5. डा० मुहम्मद सईद सिद्दीक़ी,

6. डा० शाकिर महमूद अ़ब्दुलमुनअ़िम,

7. डा० फ़िक्री अहमद उकाज़,

8. डा० अ़ब्दुल फ़त्ताह मंसूर,

इन विशेषज्ञों ने बराबर छान-बीन करते रहने के बाद एक राय होकर पांच लेखों के नीचे लिखे क्रम के साथ इनाम का हक़दार ठहराया----

1. अर्रहीक़ुल मख़्तूम (अ़रबी), लेखक--सफ़िय्युर्रहमान मुबारकपुरी, जामिया सलफ़ीया, बनारस, भारत (प्रथम)

2. ख़ातमुन्नबीयीन सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम (अंग्रेज़ी) लेखक--डा० माजिद अ़ली ख़ां, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, दिल्ली, भारत (द्वितीय)

3. पैग़म्बरे आज़म व आख़िर (उर्दू) लेखक--डा० नसीर अहमद नासिर, वाइस चांसलर जामिया मिल्लिया इस्लामिया, भावलपूर, पाकिस्तान (तृतीय)

4. मुंतक़न नुक़ूल फ़ी सीरते आज़म रसूल (अ़रबी), लेखक--शैख़ हामिद महमूद बिन मुहम्मद मंसूर लैमूद, जीज़ा मिस्र (चतुर्थ)

5. सीरतु नबी यिल-हुदा वर्रहमा (अ़रबी) लेखक--उस्ताद अ़ब्दुस्सलाम हाशिम हाफ़िज़ मदीना मुनव्वरा, सऊदी अ़रब (पंचम)

असिस्टेन्ट सेक्रेट्री जनरल मोहतरम शैख़ अली अल-मुख़्तार ने इन बातों के बाद हौसला बढ़ाने वाले मुबारकबाद भरे और दुआओं वाले शब्दों पर अपना भाषण समाप्त किया।

इसके बाद मुझे अपना विचार रखने के लिए बुलाया गया। मैंने अपने संक्षिप्त भाषण में राबिता को भारत के अंदर दावत व तब्लीग़ के कुछ ज़रूरी मगर छोड़ दिए गए अंशों की ओर तवज्जोह दिलायी, और इसके ऐसे नतीजों और असरों (प्रभाव) की ओर तवज्जोह दिलायी, जिसकी आशा की जाती है। राबिता की ओर से इसका हौसला बढ़ाने वाला जवाब दिया गया।

इसके बाद अमीरे मोहतरम सऊद बिन अब्दुल मोहसिन ने क्रम से पांचों पुरस्कार दिए और क़ुरआन की तिलावत पर सभा समाप्त हुई।

17 रबीउल आख़िर, जुमेरात (बृहस्पतिवार) के दिन हमारे क़ाफ़िले का रुख़ मदीना मुनव्वरा की ओर था। रास्ते में बद्र के एतिहासिक जंगी (लड़ाई के) मैदान को थोड़ी देर देख कर आगे बढ़े तो अस्र से कुछ पहले हरमे नबवी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दर व दीवार का जलाल व जगात निगाहों के सामने था। कुछ दिन बाद एक सुबह ख़ैबर भी गए और वहां का एतिहासिक क़िला अंदर और बाहर से देखा, फिर कुछ घूम फिर कर संध्या-समय मदीना मुनव्वरा को वापस हुए और आख़िरी पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जलवा गाह, जिब्रीले अमीन के उतरने की जगह, फ़रिश्तों के आने के ठिकाने और इस्लाम के इस क्रान्ति-केन्द्र में दो सप्ताह गुज़ार कर देखने के शौक़ ने फिर हरमे काबा की राह ली, यहां तवाफ़ व सअ़ी (दौड़) के "हंगामे" में और एक सप्ताह बिताने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। नातेदारों, दोस्तों, बुज़ुर्गों, आलिमों और बड़ों ने, क्या मक्का, क्या मदीना, हर जगह हाथों-हाथ लिया। यूं मेरे सपनों-कामनाओं की पवित्र धरती हिजाज़े मुक़द्दस के अंदर एक महीने की मुद्दत आंख झपकते ही गुज़र गयी और मैं फिर भारत वापस आ गया।

حیف در چشم زدن صحبت یار آخر شد روئے گل سیر ندیدیم و بہار آخر شد

(अफ़सोस, आंख झपकते ही यार की संगति का अंत हो गया। फूल के चेहरे को देखने से अभी जी न भरा था कि बहार का अंत हो गया)

हिजाज़ से वापस हुआ तो भारत व पाक के उर्दू जानने वालों की ओर से किताब का उर्दू में अनुवाद करने का तक़ाज़ा शुरू हो गया, जो कई वर्ष बीत जाने के बाद भी बराबर चलता रहा। इधर नयी-नयी मसरुफ़ियात इतनी सामने आती गईं कि अनुवाद के लिए समय निकालना असंभव सा था, फिर भी मसरुफ़ियात की इस भीड़ में अनुवाद शुरू कर दिया गया और अल्लाह का बहुत अधिक शुक्र है कि कुछ महीनों की थोड़ी कोशिश से पूरा हो गया।

وَلِلّٰهِ الْأَمْرُ مِنْ قَبْلُ وَمِنْ بَعْدُ

आख़िर में मैं उन तमाम बुज़ुर्गों, दोस्तों और नातेदारों का शुक्रिया अदा करना ज़रूरी समझता हूं, जिन्होंने इस काम में किसी भी तरह मुझे सहयोग दिया, ख़ास तौर से मान्य उस्ताद मौलवी अब्दुर्रहमान साहब रहमानी और प्रिय जन शैख़ उज़ैर साहब और हाफ़िज़ मुहम्मद इलयास साहब, मदीना युनिवर्सिटी से पढ़ कर फ़ारिग़ लोगों का कि उनके मश्वरे और प्रोत्साहन ने मुझे थोड़े से समय में इस पुस्तक की तैयारी में बड़ी सहायता पहुंचाई। अल्लाह इन सब को अच्छा बदला दे, अल्लाह हमारा समर्थक व सहायक हो। किताब को क़ुबूल फ़रमाए और लिखने वाले और मदद करने वालों और फ़ायदा उठाने वालों के लिए कल्याण और मुक्ति का साधन बनाए। आमीन!

सफ़िय्युर्रहमान मुबारकपुरी

13 रमज़ानुल मुबारक 1404 हि0

आत्म-कथा

الحمد لله رب العالمين والصلاة والسلام على سيد الأولين والآخرين،
محمّد خاتم النبيين، وعلى آله وصحبه اجمعين، امّابعد،

चूंकि राबिता-ए-आलमे इस्लामी ने सीरत-ए-नबवी (हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जीवनी पर लेख लिखने) के मुक़ाबले में हिस्सा लेने वालों को पाबन्द किया है कि वे अपनी ज़िंदगी के हालात भी लिखें, इसलिए नीचे की पंक्तियों में अपनी सादा ज़िंदगी के बारे में कुछ बातें पेश कर रहा हूं।

वंश

सफ़िय्युर्रहमान बिन अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद अकबर बिन मुहम्मद अली बिन अब्दुल मोमिन बिन फ़क़ीरुल्लाह मुबारकपुरी आज़मी।

जन्म

सर्टीफ़िकेट में मेरा जन्म 6 जून 1943 ई० लिखा हुआ है, लेकिन यह अनुमान की बात है। खोज करने पर मालूम हुआ है कि जन्मतिथि 1942 ई० के मध्य की है। जन्म-स्थली गांव हुसैनाबाद है जो मुबारकपुर के उत्तर में एक मील की दूरी पर एक छोटी सी बस्ती है। मुबारकपुर ज़िला आज़मगढ़ का एक मशहूर, इलमी (पढ़ा-लिखा) और औद्योगिक क़स्बा है।

शिक्षा

मैंने बचपन में क़ुरआन मजीद का कुछ हिस्सा अपने दादा और चचा से पढ़ा, फिर 1948 ई० में मदरसा दारुत्तालीम मुबारकपुर में दाख़िल हुआ। वहां छः साल रह कर प्राइमरी कक्षा और मिडिल कोर्स की शिक्षा पूरी की। कुछ फ़ारसी भी पढ़ी। इसके बाद जून 1954 ई० में मदरसा एहयाउल-उलूम मुबारकपुर में दाख़िल हुआ और वहां अरबी भाषा और व्याकरण (नह्व व सर्फ़) और कुछ दूसरी कलाओं की शिक्षा प्राप्त करनी शुरू की। दो वर्ष बाद मदरसा फ़ैज़े आम मऊ पहुंचा। इस मदरसे (स्कूल) को इस क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण धार्मिक स्कूल की हैसियत हासिल है और मऊ नाथ भंजन क़स्बा मुबारकुर से 35 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।

फ़ैज़े आम में मेरा दाख़िला मई सन् 1956 ई० में हुआ। मैंने वहां पांच साल बिताए और अरबी भाषा, व्याकरण और शरई ज्ञान-विज्ञान अर्थात तफ़्सीर, हदीस, उसूले हदीस, फ़िक़्ह और उसूले फ़िक़्ह आदि की शिक्षा प्राप्त की। जनवरी सन् 1961 ई० में मेरी शिक्षा पूरी हो गयी और मुझे बाक़ायदा शहादतुत्तख़रुज (यानी सनदे तक्मील) दे दी गई। यह सनद (प्रमाण-पत्र) फ़ज़ीलत फ़िश्शरीअः और फ़ज़ीलत फ़िल उलूम की सनद है और पढ़ाने और फ़त्वा देने की इजाज़त पर सम्मिलित है।

मेरा सौभाग्य है कि मुझे तमाम परीक्षाओं में डिस्टिंकशन मार्क्स (नुमायां नम्बरों) से सफलता मिलती रही।

पढ़ाई के समय में मैंने इलाहाबाद बोर्ड की परीक्षाओं में भी शिरकत की। फ़रवरी 1959 ई० में मौलवी और फ़रवरी 1960 ई० में आलिम की परीक्षाएं दीं और दोनों में फ़र्स्ट डिवीज़न से सफल रहा।

फिर एक लम्बी मुद्दत के बाद अध्यापकों से मुताल्लिक़ नयी परिस्थितियों को दृष्टि में रख कर मैंने फ़रवरी 1976 ई० में "फ़ाज़िले अदब" (और फ़रवरी 1978 ई० में फ़ाज़िले दीनियात) की परीक्षा दी और अल्लाह का शुक्र है कि दोनों में फर्स्ट डिवीजन से सफल हुआ।

जीवन की कुछ उपलब्धियां

1961 ई० में "मदरसा फ़ैज़े आम" से फ़ारिग़ होकर मैंने ज़िला इलाहाबाद, फिर शहर नागपुर में पढ़ने-पढ़ाने और बोलने व भाषण देने का कार्य अपनाया। दो साल बाद मार्च 1963 ई० में मादरे इल्मी मदरसा फ़ैज़े आम के नाज़िमे अअ़ला (सब से बड़े ज़िम्मेदार) ने मुझे पढ़ाने के काम के लिए बुलाया, लेकिन मैंने वहां दो साल मुश्किल से गुज़ारे थे कि परिस्थितियों ने अलग होने पर मजबूर कर दिया, अगला साल "जामिअ़तुर्रशाद" आज़मगढ़ की भेंट चढ़ा और फ़रवरी 1966 ई० से मदरसा दारुल-हदीस मऊ की दावत पर वहां अध्यापक हो गया। तीन साल यहां गुज़ारे और पढ़ाने के अ़लावा नायब सदर मुदर्रिस (उप हेड मास्टर) की हैसियत से शैक्षिक मामलों और आन्तरिक प्रबन्धों की निगरानी में भी शरीक रहा। फिर इस्तीफ़ा देकर मदरसा फ़ैज़ुल उलूम सिवनी की सेवा में जा लगा, जो मऊ नाथ भंजन से कोई सात सौ किलोमीटर मध्य प्रदेश में स्थित है। वहां जनवरी 1969 से मैंने पढ़ाने की ज़िम्मेदारी निभाने के अ़लावा हेड मास्टर की हैसियत से मदरसे के तमाम बाहरी-भीतरी इन्तिज़ामों की ज़िम्मेदारी भी संभाली और जुमा का ख़ुत्बा देना और आस-पास के देहातों में जा-जा कर दावत व तब्लीग़ का काम करना भी अपने रोज़ के कामों में शामिल किया।

फिर 1972 के आख़िर से मदरसा दारूत-तालीम मुबारकपुर में पढ़ाने की ज़िम्मेदारी संभाली और 2 साल बाद अकतूबर 1974 ई० में जामिया सलफ़ीया आ गया, जब से यहीं काम कर रहा हूं।

किताबें जो लिखी गयीं

पढ़ाई पूरी कर लेने के बाद मैंने इस लम्बी मुद्दत में कुछ न कुछ पढ़ने-पढ़ाने के साथ-साथ लिखने-पढ़ने का काम भी जारी रखा। चुनांचे मेरी मुख्य पुस्तकें निम्नलिखित हैं:

(1) तज़किरा-ए-शैख़ुल इस्लाम मुहम्मद बिन अ़ब्दुल वह्हाब

(1972): यह किताब चार बार छप चुकी है।

(2) तारीख़े आले सऊद (उर्दू सन् 1972 ई०)

यह किताब दो बार छप चुकी है।

(3) इत्तिहाफुल किराम, तालीक़ बुलूग़ुल मराम लि-इब्ने हजर अ़स्क़लानी (अ़रबी) 1974ई० में प्रकाशित

(4) क़ादियानियत, अपने आईने में

(उर्दू 1976 ई०) प्रकाशित,

(5) फ़ित्ना-ए-क़ादियानियत और मौलवी सनाउल्लाह अमृतसरी

(उर्दू, 1976 ई०) प्रकाशित,

(6) अर्रहीकुल मख़्तूम, राबिता-ए-आ़लमे इस्लामी में पेश करने के लिए लिखी गई।

(7) इंकारे हदीस, हक़ या बातिल?

(उर्दू 1977 ई०) प्रकाशित

(8) रज़्मे हक़ व बातिल

(मुनाज़रा बज्रडीहा की रिपोर्ट सन् 1978 ई०) प्रकाशित

(9) इबराजुल हक़ वस्सवाब फ़ी मस्अलतिस्सुफ़ूर वल हिजाब

(अरबी 1978 ई०) परदे से मुताल्लिक़ अ़ल्लामा डा० तक़ीयुद्दीन हिलाली मराक़शी की राय पर नक़्द (आलोचना) है और पत्रिका अल-जामियतुस्सलफ़ीया में क़िस्तों में छपा है।

(10) ततव्वरुश-शुऊब वद्दयानातु फ़िल हिन्द व मजालुद्दावतिल इस्लामीया फ़ीहा

(अरबी 1979 ई०) कुछ क़िस्तें पत्रिका 'अल-जामियतुस्सलफ़ीया' में छप चुकी हैं।

(11) अल-फ़िर्क़तुन्नाजीया वल फ़िरकुल इस्लामियतिल-उख़्रा

(अरबी 1982 ई०) अप्रकाशित

(12) इस्लाम और अ़दमे तशद्दुद

(उर्दू 1984 ई०) प्रकाशित (हिन्दी और अंग्रेजी अनुवाद भी छप चुका है)

(13) अहले तसव्वुफ़ की कारस्तानियां

(उर्दू 1986 ई०) प्रकाशित

(14) अल-अहज़ाबुस्सियासीया फ़िल इस्लाम

(अ़रबी 1986 ई०) प्रकाशित

इन पुस्तकों के अ़लावा मासिक "**मुहद्दिस**" बनारस की एडिटरशिप की ज़िम्मेदारियां भी निभा रहा हूं।

واللّٰه الموفق وازمة الامور كلها بيده ربنا تقبله منا بقبول حسن وانبته نباتا حسنا

इस किताब के बारे में

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

الحمد لله الذى ارسل رسوله بالهدى و دين الحق ليظهره على الدين كله، فجعله شاهدا و مبشرا و نذيرا، و داعيا إلى الله بإذنه و سراجا منيرا، وجعل فيه اسوة حسنة لمن كان يرجو الله و اليوم الآخر و ذكر الله كثيرا، اللّهم صل وسلم و بارك عليه وعلى آله وصحبه و من تبعهم بإحسان إلى يوم الدين، و فجر لهم ينابيع الرحمة و الرضوان تفجيرا، اما بعد

यह बड़ी ख़ुशी की बात है कि रबीउल-अव्वल सन् 1396 हि० में पाकिस्तान के अंदर होने वाली सीरत कान्फ्रेंस के अंत में राबिता-ए-आलमे इस्लामी ने सीरत (हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जीवन-चरित्र) के विषय पर लेख लिखने का एक विश्वव्यापी मुक़ाबला करने का एलान किया है, जिसका उद्देश्य यह है कि क़लमकारों में एक तरह की उमंग और चिन्तनात्मक खोजों में एक तरह का मेल पैदा हो। मेरे विचार में यह बड़ा मुबारक क़दम है, क्योंकि अगर गहराई में जाकर देखा जाए तो मालूम होगा कि हक़ीक़त में नबी की सीरत और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मिसाली ज़िंदगी ही वह अकेला स्त्रोत है जिससे इस्लामी दुनिया की ज़िंदगी और इंसानी समाज की बेहतरी के स्त्रोत फूटते हैं। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ाते बा बरकात पर अनगिनत दरूद व सलाम हो।

फिर यह मेरी भलाई और खुशक़िस्मती होगी कि मैं भी इस मुबारक मुक़ाबले में शिरकत करूं, लेकिन मेरी हैसियत ही क्या है कि मैं प्यारे और अगले पिछले लोगों के सरदार नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक ज़िंदगी पर रोशनी डाल सकूं। मैं तो अपना सारा सौभाग्य और पूरी सफ़लता इसी में समझता हूं कि मुझे आपकी रोशनी का कुछ हिस्सा मिल जाए, ताकि मैं अंधेरों में भटक कर हलाक होने के बजाए आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के एक उम्मती (मानने वाले) की हैसियत से आपके चमचमाते रास्ते पर चलता हुआ ज़िंदगी गुज़ारूं और इसी रास्ते में मेरी मौत भी आए और फिर आपकी शफ़ाअ़त (सिफ़ारिश) की बरकत से अल्लाह मेरे गुनाहों पर माफ़ी की क़लम फेर दे।

एक छोटी सी बात अपनी इस किताब की शैली के बारे में भी कहने की ज़रूरत महसूस कर रहा हूं और वह यह है कि मैंने किताब लिखने से पहले ही तय कर लिया था कि इसे बोझ बन जाने वाली लम्बाई और मक़सद अदा न कर पाने वाले संक्षेप, दोनों से बचते हुए बीच वाली मोटाई में लिखूंगा, लेकिन जब सीरत की किताबों पर निगाह डाली तो देखा कि घटनाओं के क्रम और छोटी-छोटी बातों की तफ़्सील में बड़ा मतभेद है, इसलिए मैंने फ़ैसला किया कि जहां-जहां ऐसी शक्ल सामने आए, वहां वार्ता के हर पहलू पर नज़र दौड़ा कर और भरपूर छान-फटक करके जो नतीजा निकालूं उसे असल किताब में लिख दूं। और दलीलों और गवाहों की तफ़्सील और तर्जीह की वज्हों का ज़िक्र न करूं, वरना किताब अनचाही सीमा तक लम्बी हो जाएगी, अलबत्ता जहां यह डर हो कि मेरी रिसर्च (जाँच पड़ताल) पढ़ने वालों के लिए हैरत और ताज्जुब की वजह बनेगी, या जिन घटनाओं के सिलसिले में आम लिखने वाले कोई ऐसा चित्र सामने लाए हों जो मेरे हिसाब से सही न हो, वहां दलीलों की ओर भी इशारा कर दूं।

ऐ अल्लाह! मेरे लिए दुनिया और आख़िरत की भलाई तय फ़रमा। तू यक़ीनी तौर पर माफ़ करने वाला और देने वाला है, अ़र्श का मालिक है और बुज़ुर्ग व बरतर है।

जुमा
24 रजब 1396 हि० मुताबिक़
23 जुलाई 1976 ई०

सफ़िय्युर्रहमान मुबारकपुरी
जामिया सलफ़ीया
बनारस, भारत

इस्लाम के प्रारम्भ में अरब की स्थिति

अरब..... भूभाग और क़ौमें

प्यारे नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सीरत (चरित्र-आचरण आदि), वास्तव में रब के उस संदेश के व्यवहारिक प्रतिबिन्ब का नाम है, जिसे अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इंसानी गिरोह के सामने रखा था और जिसके द्वारा इंसान को अंधेरों से निकाल कर रोशनी में और बंदों की बन्दगी से निकाल कर अल्लाह की बन्दगी में दाख़िल कर दिया था। चूंकि इस पाक सीरत का पूरा नक़्शा खींचना संभव नहीं, जब तक कि रब के उस पैग़ाम (संदेश) के उतरने से पहले के हालात और बाद के हालात का मुक़ाबला न किया जाए, इसलिए असल वार्ता से पहले इस अध्याय में इस्लाम के पहले की अ़रब क़ौमों और उनके हालात बताते हुए उन हालात का चित्र दिया जा रहा है, जिनमें अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भेजे गए थे।

अरब का भूभाग

अ़रब शब्द का मूल अर्थ है बिना घास-पानी की वीरान ज़मीन, पुराने समय से यह शब्द अरब प्रायद्वीप और उसमें बसने वाली क़ौमों के लिए बोला गया है।

अरब के पश्चिम में लाल सागर और सीना प्रायद्वीप है। पूरब में अरब खाड़ी और दक्षिणी इराक़ का एक बड़ा भाग है। दक्षिण में अरब सागर है जो वास्तव में हिन्द सागर का फैलाव है। उत्तर में शाम

(सीरिया) देश और किसी हद तक उत्तरी इराक़ है। इनमें से कुछ सीमाओं के बारे में मतभेद भी है। कुल क्षेत्र का अंदाज़ा दस लाख से तेरह लाख वर्ग मील तक किया गया है।

अरब प्रायद्वीप प्राकृतिक और भौगोलिक दृष्टि से बड़ा महत्व रखता है। आन्तरिक रूप से यह हर तरफ़ से मरूस्थल से घिरा हुआ है, जिसके कारण यह ऐसा सुरक्षित क़िला बन गया है कि बाहरी क़ौमों के लिए उस पर क़ब्ज़ा करना और अपना प्रभाव फैलाना बहुत कठिन है। यही वजह है कि अरब प्रायद्वीप के मध्य के निवासी प्राचीन समय से अपने तमाम मामलों में पूरी तरह स्वतंत्र दिखाई पड़ते हैं। हालांकि ये ऐसी दो महान शक्तियों के पड़ोसी थे कि अगर यह ठोस प्राकृतिक रुकावट न होती तो उनके आक्रमण को रोक लेना अरब वासियों के बस की बात न थी।

बाहरी रूप से अरब प्रायद्वीप पुरानी दुनिया के तमाम मालूम महाद्वीपों के बीचों-बीच स्थित है और जल-थल दोनों रास्तों से उनके साथ जुड़ा हुआ है। इसका उत्तर-पश्चिमी कोना अफ़्रीक़ा महाद्वीप में प्रवेश करने का दरवाज़ा है। उत्तर-पूर्वी कोना यूरोप की कुंजी है। पूर्वी कोना ईरान, मध्य एशिया और दूर पूरब के दरवाज़े खोलता है और भारत और चीन तक पहुंचाता है। इसी तरह हर महाद्वीप समुद्र के रास्ते भी अरब प्रायद्वीप से जुड़ा हुआ है और उनके जहाज़ अरब बन्दरगाहों पर सीधे-सीधे आकर रुकते हैं।

इस भौगोलिक स्थिति की वजह से अरब प्रायद्वीप के उत्तरी और दक्षिणी कोने विभिन्न क़ौमों के ठिकाने और व्यापार-संस्कृति, कला व धर्मों के लेन-देन का केन्द्र रह चुके हैं।

अरब जातियां

इतिहासकारों ने नस्ल की दृष्टि से अरब क़ौमों की तीन क़िस्में बतायी हैं--

(1) अ़रब बाइदाः

यानी वे पुराने अरब क़बीले और क़ौमें जो बिल्कुल ख़त्म हो गईं और उन के बारे में ज़रूरी बातें भी मालूम नहीं, जैसे आ़द, समूद, तस्म, जदीस, अ़मालिक़ा वग़ैरह।

(2) अ़रब आ़रिबाः

यानी वे अरब क़बीले जो यारुब बिन यशजब बिन क़हतान की नस्ल से हैं इन्हें क़हतानी अरब कहा जाता है।

(3) अ़रब मुस्तारबाः

यानी वे अ़रब क़बीले जो हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम की नस्ल से हैं इन्हें अ़दनानी अरब कहा जाता है।

अ़रब आ़रिबाः-- यानी क़हतानी अरब की असल जगह यमन देश था। यहीं उनके परिवार और क़बीले विभिन्न शाखाओं में फूटे, फैले और बढ़े। इनमें से दो क़बीलों ने बड़ी प्रसिद्धि पाई।

(क) हिमयरः

जिसकी प्रसिद्ध शाखाएं ज़ैदुल-जम्हूर, कुज़ाआ़ और सकासिक हैं।

(ख) कहलानः

जिसकी प्रसिद्ध शाखाएं हमदान, अन्मार, तई, मज़हिज, किन्दा, लख़्म, जुज़ाम, अज़्द, औस, ख़ज़रज और औलादे जफ़ना हैं जिन्होंने आगे चल कर शाम देश के हर ओर बादशाही क़ायम की और आले ग़स्सान के नाम से मशहूर हुए।

आम कहलानी क़बीलों ने बाद में यमन छोड़ दिया और अ़रब प्रायद्वीप के अलग-अलग भागों में फैल गए। उनके आम तौर से वतन छोड़ने का वाक़िया सैले अ़रिम से कुछ पहले उस वक़्त पेश आया, जब

रूमियों ने मिस्र और शाम पर क़ब्ज़ा करके यमन वालों के व्यापार के समुद्री रास्ते पर अपना क़ब्ज़ा जमा लिया और थलीय रास्तों की आसानी ग़ारत करके अपना दबाव इतना बढ़ा दिया कि कहलानियों का व्यापार नष्ट होकर रह गया।

कुछ आश्चर्य नहीं कि कहलानी और हिमयरी परिवारों में नोक झोंक भी रही हो और यह भी कहलानियों के वतन छोड़ने की एक असरदार वजह बनी हो। इसका इशारा इससे मिलता है कि कहलानी क़बीलों ने तो वतन (देश) छोड़ दिया, लेकिन हिमयरी क़बीले अपनी जगह बाक़ी रहे।

जिन कहलानी क़बीलों ने वतन छोड़ा, उनकी चार क़िस्में की जा सकती हैं।

1. अज़्द:

उन्होंने अपने सरदार इमरान बिन अम्र मज़ीक़िया की सलाह पर वतन (देश) छोड़ दिया। पहले तो ये यमन ही में एक जगह से दूसरी जगह रहते रहे और हालात का पता लगाने के लिए आगे-आगे चलने वाली टुकड़ियों को भेजते रहे, लेकिन अन्त में उत्तर की ओर चले और अलग-अलग शाखाएं घूमते-घुमाते अलग-अलग जगहों पर हमेशा के लिए रहने-सहने लगे। इसका विस्तृत वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

सालबा बिन अम्र:

इसने पहले तो हिजाज़ का रुख़ किया और सालबीया और जीक़ार के बीच रहने-सहने लगे। जब उसकी औलाद बड़ी हो गई और ख़ानदान मज़बूत हो गया तो मदीना की तरफ़ कूच किया और उसी को अपना वतन बना लिया। इसी सालबा की नस्ल से औस और ख़ज़रज हैं जो सालबा के बेटे हारिस के बेटे हैं।

हारिसा बिन अ़म्रः

यानी ख़ुज़ाआ़ और उसकी संतान, ये लोग पहले हिजाज़ भू-भाग में घूमते-घामते मर्रज़्ज़हरान में ठहरे, फिर हरम पर धावा बोल दिया और बनू जुरहुम को निकाल कर ख़ुद मक्का में रहने-सहने लगे।

इमरान बिन अ़म्रः

इसने और इसकी संतान ने उमान में रहना शुरू किया, इसलिए ये लोग अज़्दे उमान कहलाते हैं।

नस्र बिन अ़ज़्दः

इससे ताल्लुक़ रखने वाले क़बीलों ने तिहामा में निवास किया। ये लोग अ़ज़्दे शनूआ़ कहलाते हैं।

जफ़नां बिन अ़म्रः

इसने शाम (सीरिया) देश का रुख़ किया और अपनी संतान समेत वहीं ठहर गया। यही आदमी ग़स्सानी बादशाहों का पूर्वज है। इन्हें आले ग़स्सान इसलिए कहा जाता है कि इन लोगों ने शाम जाने से पहले हिजाज़ में ग़स्सान नाम के एक चश्मे (सोते) पर कुछ दिनों पड़ाव किया था।

2. लख़्म व जुज़ाम

इन ही लख़्मियों में नस्र बिन रबीआ़ था। जो हियरा के बादशाहों आले मुंज़िर का पूर्वज है।

3. बनू तईः

इस क़बीले ने बनू अ़ज़्द के वतन छोड़ देने के बाद उत्तर का रुख़ किया, और अजा और सलमा नामी दो पहाड़ियों के चारों ओर स्थायी रूप से बस गए, यहां तक कि ये दोनों पहाड़ियां तई क़बीला के ताल्लुक़ से मशहूर हो गईं।

4. किन्दाः

ये लोग पहले बहरैन-----वर्तमान अल-अहसा------में ठहरे, लेकिन मजबूरी में वहां से हज़रमौत गए, मगर वहां भी अमान न मिली और अन्त में नज्द में डेरे डालने पड़े। यहां इन लोगों ने ज़ोरदार शासन की बुनियाद रखी, पर इस शासन को दृढ़ता न मिली और इसके निशान जल्द ही ख़त्म हो गए।

कहलान के अलावा हिमयर का भी सिर्फ़ एक क़बीला कुज़ाआ ऐसा है-----और इसके हिमयरी होने में भी मतभेद है-----जिसने यमन से वतन छोड़ कर इराक़ सीमाओं में बादियतुस्समावा में रहना-सहना शुरू किया।[1]

अरब मुस्तारबा

इनके पूर्वज सय्यिदना इब्राहीम अलैहिस्सलाम की नस्ल से इराक़ के एक शहर ऊर के निवासी थे। यह शहर फ़ुरात नदी के पश्चिमी तट पर कूफ़ा के क़रीब स्थित था। इसकी खुदाई होने पर जो लिखित सामग्री मिली है, उनसे इस शहर के बारे में बहुत सी बातें सविस्तार सामने आई हैं और हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के वंश की कुछ विस्तृत बातें और देश-वासियों की धार्मिक और सामूहिक परिस्थितियों से भी परदा हटा है।

यह मालूम है कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम यहां से हिजरत करके शहर हर्रान तशरीफ़ ले गए थे और फिर वहां से फ़लस्तीन जाकर उसी देश को अपनी पैग़म्बरों वाली गतिविधियों का केन्द्र बना लिया था और दावत व तब्लीग़ के लिए यहीं से देश के भीतर-बाहर अपने काम में लगे रहा करते थे। एक बार आप मिस्र तशरीफ़ ले गए। फ़िरऔन ने आपकी बीवी हज़रत सारा का हाल सुना तो उनके बारे में उसकी नीयत

---

1) इन क़बीलों की और इनके स्वदेश छोड़ने की अधिक जानकारी के लिए देखिए अल-ख़िज़री की मुहाज़िरातु तारीख़िल- उमम्मिल-इस्लामिया 1/11-13

ख़राब हो गयी और अपने दरबार में बुरे इरादे से बुलाया, लेकिन अल्लाह ने हज़रत सारा की दुआ के नतीजे में ग़ैबी (परोक्ष) रूप से फ़िरऔन की ऐसी पकड़ की कि वह हाथ-पांव मारने और फेंकने लगा। उसकी बुरी नीयत उसके मुंह पर मार दी गई और वह घटना के रूप से समझ गया कि हज़रत सारा अल्लाह की बड़ी ख़ास और क़रीबी बंदी हैं और वह हज़रत सारा की इस विशेषता से इतना प्रभावित हुआ कि अपनी बेटी[2] हाजरा को उनकी सेवा में दे दिया, फिर हज़रत सारा ने हज़रत हाजरा को हज़रत इब्राहीम के निकाह में दे दिया।[3]

हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम, हज़रत सारा और हज़रत हाजरा को साथ लेकर फ़लस्तीन वापस तशरीफ़ लाए, फिर अल्लाह ने हज़रत इब्राहीम अ़लैहि० को हज़रत हाजरा के गर्भ से एक लायक़ बेटा----- इस्माईल अ़लैहिस्सलाम----दिया, लेकिन उस पर हज़रत सारा जो निःसन्तान थीं बड़ी ग़ैरत आई और उन्होंने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को मजबूर किया कि हज़रत हाजरा को उनके नवजात बच्चे समेत देश निकाला दे दें। परिस्थिति ऐसी पैदा हुई कि उन्हें हज़रत सारा की बात माननी पड़ी और वह हज़रत हाजरा और हज़रत इस्माईल अ़लैहि० को साथ लेकर हिजाज़ तशरीफ़ ले गए और वहां एक वीरान घाटी में बैतुल्लाह शरीफ़ के क़रीब ठहरा दिया। उस वक़्त बैतुल्लाह शरीफ़ न था, केवल टीले की तरह उभरी हुई ज़मीन थी। बाढ़ आती थी, तो दांए बाएं से कतरा कर निकल जाती थी। वहीं मस्जिदे हराम के ऊपरी भाग में ज़मज़म के पास एक बहुत बड़ा पेड़ था। आप ने उसी पेड़ के पास हज़रत हाजरा और हज़रत इस्माईल अलैहि० को छोड़ा था। उस समय मक्का में न पानी था, न आदम और न आदमज़ाद, इसलिए हज़रत

2) कहा जाता है कि हज़रत हाजरा दासी थीं लेकिन अल्लमा मनसूरपुरी ने सिद्ध किया है कि वह दासी नहीं बल्कि आज़ाद थीं और फ़िरऔन की बेटी थीं देखिए रहमतुल-लिल-आलमीन 2/36-37

3) उपरोक्त हाशिया 2/34 तथा बुख़ारी 1/484

इब्राहीम अलैहि० ने एक बर्तन में खजूर और एक मश्क में पानी रख दिया, इसके बाद फ़लस्तीन वापस चले गए, लेकिन कुछ ही दिनों में खजूर और पानी ख़त्म हो गया और बड़ी परेशानी हुई, मगर इस कठिन घड़ी में अल्लाह की दया-कृपा से ज़मज़म का सोता फूट पड़ा और कुछ समय तक के लिए रोज़ी का सामान और जीवन की पूंजी बन गया। विस्तृत विवेचन मालूम और मशहूर है।[4]

कुछ दिनों बाद यमन से एक क़बीला आया, जिसे इतिहास में जुरहुम द्वितीय कहा जाता है। यह क़बीला इस्माईल अलैहि० की मां से इजाज़त लेकर मक्का में ठहर गया। कहा जाता है कि यह क़बीला पहले मक्का के आस-पास की घाटियों में रहता था। सहीह बुख़ारी में इतना और है कि (रहने के उद्देश्य से) ये लोग मक्का में हज़रत इस्माईल अलैहि० के आने के बाद और उनके जवान होने से पहले आए थे, लेकिन इस घाटी से उनका गुज़र इससे पहले भी हुआ करता था।[5]

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम अपनी छोड़ी हुई चीज़ों की निगरानी के लिए कभी-कभार मक्का तशरीफ़ लाया करते थे, लेकिन यह न मालूम हो सका कि इस तरह उन का आना कितनी बार हुआ, अलबत्ता इतिहास में चार बार उनके आने का विवेचन सुरक्षित है, जो यह है---

1. कुरआन में बयान किया गया है कि अल्लाह ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को सपने में दिखाया कि वह अपने सुपुत्र (हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम) को ज़िब्ह कर रहे है। यह सपना एक तरह का अल्लाह का हुक्म था और बाप-बेटे दोनों अल्लाह के इस हुक्म को पूरा करने के लिए तैयार हो गए। और जब दोनों ने हुक्म पूरा करने के लिए सर झुका दिया और बाप ने बेटे को माथे के बल लिटा दिया, तो अल्लाह ने पुकारा, "ऐ इब्राहीम! तुम ने सपने को सच कर दिखाया, हम नेकों

4) बुख़ारी किताबुल-अंबिया 1/474-475

5) बुख़ारी 1/475

को इसी तरह बदला देते हैं। यक़ीनी तौर पर यह एक खुली हुई आज़माइश थी और अल्लाह ने इन्हें फ़िद्ये में एक बड़ा ज़बीहा अ़ता फ़रमाया।"[6]

बाइबिल की किताब पैदाइश में ज़िक्र है कि हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम, हज़रत इस्हाक़ अलैहिस्सलाम से 13 साल बड़े थे और क़ुरआन ही से यह पता चलता है कि यह घटना हज़रत इस्हाक़ अलैहिस्सलाम के जन्म से पहले पेश आयी थी, क्योंकि पूरी घटना बता चुकने के बाद हज़रत इस्हाक़ अलैहिस्सलाम के जन्म की शुभ सूचना का उल्लेख है।

इस घटना से मालूम होता है कि हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम के जवान होने से पहले कम से कम एक बार हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने मक्का की यात्रा ज़रूर की थी। बाक़ी तीन यात्राओं का विवरण सहीह बुख़ारी की एक लम्बी रिवायत में है जो इब्ने अ़ब्बास रज़ि० से मरफ़ूअ़न रिवायत की गई है।[7] इस का सार यह है---

2. हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम जब जवान हो गए, जुरहुम से अ़रबी भाषा सीख ली और उनकी निगाहों में जचने लगे, तो उन लोगों ने अपने ख़ानदान की एक औरत से आपकी शादी कर दी। इसी बीच हज़रत हाजरा का इंतिक़ाल हो गया। उधर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को ख़्याल हुआ कि अपना तरका (छोड़ा हुआ माल) देखना चाहिए। चुनांचे वह मक्का तशरीफ़ ले गए, लेकिन हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम से मुलाक़ात न हुई, बहू से हालात मालूम किए तो उसने तंगदस्ती की शिकायत की। आपने वसीयत की कि इस्माईल अलैहिस्सलाम आएं तो कहना, अपने दरवाज़े की चौखट बदल दें। इस वसीयत का मतलब हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम समझ गए। बीवी को तलाक़ दे दी और

---

6) सूरः साफ़्फ़ात 103-107

7) बुख़ारी 1/475-476

एक दूसरी औरत से शादी कर ली जो जुरहुम के सरदार मज़ाज़ बिन अम्र की बेटी थी।[8]

3. इस दूसरी शादी के बाद एक बार फिर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम मक्का तशरीफ़ ले गए, मगर इस बार भी हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम से मुलाक़ात न हुई। बहू से हालात मालूम किए तो उसने अल्लाह की हम्द व सना (गुण-गान) की। आपने वसीयत की कि इस्माईल अलैहिस्सलाम अपने दरवाज़े की चौखट बाक़ी रखें और फ़लस्तीन वापस हो गए।

4. इसके बाद फिर तशरीफ़ लाए तो इस्माईल अलैहिस्सलाम ज़मज़म के कुंए के करीब एक पेड़ के नीचे तीर घढ़ रहे थे। देखते ही लपक पड़े और वही किया जो ऐसे मौक़े पर एक बाप अपने बेटे के साथ और बेटा बाप के साथ करता है। यह मुलाक़ात इतनी लम्बी मुद्दत के बाद हुई थी कि एक नर्म दिल और मेहरबान बाप अपने बेटे से और एक आज्ञापालक बेटा अपने बाप से मुश्किल से ही इतनी लम्बी जुदाई सहन कर सकता है। इसी बार दोनों ने मिलकर खाना-ए-काबा बनाया, बुनियाद खोद कर दीवारें उठाईं और इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने सारी दुनिया के लोगों को हज के लिए आवाज़ दी।

अल्लाह ने मज़ाज़ की बेटी से इस्माईल अलैहिस्सलाम को बारह बेटे दिए,[9] जिनके नाम ये हैं—

1. नाबित या नबायूत, 2. क़ैदार, 3. अदबाईल, 4. हिशाम, 5. मशमाअ़ 6. दूमा, 7. मीशा, 8. हदद, 9. तैमा, 10. नफ़ीस, 11. यतूर, 12. क़ैदमान।

---

8) क़ल्बु जज़ीरतिल- अ़रब 230

9) उपरोक्त हाशिया

इन बारह बेटों से बारह क़बीले वजूद में आए और सबने मक्का ही में रहना सहना किया, इनके खान-पान का आश्रय ज़्यादा तर यमन और मिस्र व शाम के व्यापार पर था। बाद में ये क़बीले अरब प्रायद्वीप के अलग-अलग भागों में---बल्कि अरब के बाहर भी---फैल गए और इनके हालात ज़माने की गहरी तारीकी में दब कर रह गए, सिर्फ़ नाबित और क़ैदार की औलाद इस गुमनामी से अलग हैं।

नब्तियों की संस्कृति को उत्तरी हिजाज़ में तरक़्क़ी और बढ़ौतरी मिली। उन्होंने एक ताक़तवर हुकूमत क़ायम करके आस-पास के लोगों को अपना कर दाता बना लिया। बतरा इनकी राजधानी थी। किसी को इनके मुक़ाबले की ताब न थी, फिर रूमियों का दौर आया और उन्होंने नब्तियों को बीता हुआ क़िस्सा बना दिया। मौलवी सैयद सुलैमान नदवी रह० ने एक रोचक वार्ता और गहरी खोज के बाद साबित किया है कि आले ग़स्सान और अंसार यानी औस व ख़ज़रज क़हतानी अरब न थे, बल्कि इस इलाक़े में नाबित बिन इस्माईल अलैहिस्सलाम की जो बची-खुची नस्ल रह गई थी, वही थे।[10]

क़ैदार बिन इस्माईल अलैहिस्सलाम की नस्ल मक्का ही में फलती फूलती रही, यहां तक कि अदनान और फिर उनके बेटे मअद्द का ज़माना आ गया। अदनानी अरब का वंश-क्रम सहीह तौर पर यहीं तक सुरक्षित है।

अदनान, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वंश-क्रम में इक्कीसवीं पीढ़ी पर पड़ते हैं। कुछ रिवायतों में बयान किया गया है कि आप जब अपने वंश-क्रम का उल्लेख करते तो अदनान पर पहुंच कर रुक जाते और आगे न बढ़ते। फ़रमाते कि वंश-विशेषज्ञ ग़लत कहते हैं।[11] मगर उलमा के एक वर्ग का विचार है कि अदनान से आगे भी वंश

10) तारीख़ अरज़ुल-क़ुरआन 2/78-86

11) तबरी 2/191-194,अल अअ़लाम 5/6

बयान किया जा सकता है। उन्होंने इस रिवायत को कमज़ोर बताया है। इनकी खोज के अनुसार अदनान और हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के बीच चालीस पीढ़ियां हैं।

बहरहाल मअ़द्द के बेटे नज़ार से-------जिनके बारे में कहा जाता है कि इनके अलावा मअ़द्द की कोई संतान न थी---- कई परिवारों ने जन्म लिया। हक़ीक़त में नज़ार के चार बेटे थे और हर बेटा एक बड़े क़बीले की बुनियाद साबित हुआ। चारों के नाम ये हैं-------(1) इयाद, (2) अनमार, (3) रबीआ और (4) मुज़र। इनमें से आख़िर के दो क़बीलों की शाखाएं और शाखाओं की शाखाएं बहुत ज़्यादा हुईं। चुनांचे रबीआ से असद बिन रबीआ, अनज़ा अब्दुल क़ैस, वाइल, बक्र, तग़्लिब और बनू हनीफ़ा आदि अस्तित्व में आए।

मुज़र की संतान दो क़बीलों में बंटी।

(1) क़ैस ऐलान बिन मुज़र (2) इलयास बिन मुज़र।

क़ैस ऐलान से बनू सुलैम, बनू हवाज़िन, बनू ग़तफ़ान, ग़तफ़ान से अब्स, ज़ुबयान, अशजअ़ और ग़नी बिन आसुर के क़बीले वजूद में आए।

इलयास बिन मुज़र से तमीज बिन मुर्रा, हुज़ैल बिन मुदरिका, बनू असद बिन ख़ुज़ैमा और कनाना बिन ख़ुज़ैमा के क़बीले वजूद में आए, फिर कनाना से क़ुरैश क़बीला वजूद में आया। यही क़बीला फ़हर बिन मालिक बिन नज़र बिन कनाना की औलाद है।

फिर क़ुरैश भी अलग-अलग शाखाओं में बंट गए। मशहूर क़ुरैशी शाखाओं के नाम ये हैं---- जम्ह, सहम, अ़दी, मख़्ज़ूम, तैम, ज़ोहरा और क़ुसई बिन किलाब के परिवार यानी अ़ब्दुद्दार, असद बिन अ़ब्दुल उज़्ज़ा और अ़ब्दे मुनाफ़ ये तीनों क़ुसई के बेटे थे। इन में से अ़ब्दे मुनाफ़ के चार बेटे हुए, जिनसे चार छोटे-छोटे क़बीले वजूद में आए, यानी अ़ब्दे शम्स, नौफ़ल, मुत्तलिब और हाशिम। इन्हीं हाशिम की नस्ल से अल्लाह

ने हमारे हुज़ूर मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को चुना।[12]

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला ने इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की औलाद में से इसमाईल अ़लैहिस्सलाम को चुना फ़िर इसमाईल अ़लैहिस्सलाम की औलाद में से किनाना को चुना और किनाना की नस्ल से क़ुरैश को चुना फ़िर क़ुरैश में से बनू हाशिम को चुना और बनू हाशिम में से मुझे चुना।[13]

इब्ने अ़ब्बास रज़ि० का बयान है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, 'अल्लाह ने दुनिया को पैदा किया, तो मुझे सब से अच्छे गिरोह में बनाया, फिर उनके भी दो गिरोहों में से ज़्यादा अच्छे गिरोह के अंदर रखा, फिर क़बीलों को चुना, तो मुझे सब से अच्छे क़बीले के अंदर बनाया, फिर घरानों को चुना, तो मुझे सब से अच्छे घराने में बनाया, इसलिए मैं अपनी ज़ात के एतबार से भी सब से अच्छा हूं और अपने घरानों के एतबार से भी सब से बेहतर हूं।[14]

बहरहाल अ़दनान की नस्ल जब ज़्यादा बढ़ गई तो वह चारे-पानी की खोज में अ़रब के हर ओर बिखर गई, चुनांचे क़बीला अब्दुल क़ैस ने, बकर बिन वाइल की शाखाओं ने और बनू तमीम के परिवारों ने बहरैन का रुख़ किया और उसी इलाक़े में जा बसे।

बनू हनीफ़ा बिन साब बिन अली बिन बक्र ने यमामा का रुख़ किया और उसके केन्द्र हिज्र में ठहर गए।

बक्र बिन वाइल की बाक़ी शाखाओं ने, यमामा से लेकर बहरैन, काज़िमा तट, खाड़ी, सवादे इराक़, उबुल्ला और हीत तक के क्षेत्रों में रहना-सहना शुरू कर दिया।

---

(12) मुहाज़िरातु ख़िरासी 1/14-15

(13) मुस्लिम 2/215,तिर्मिज़ी 2/201

(14) तिरमिज़ी 2/201

बनू तग़लब फ़रातिया द्वीप में ठहर गए, अल्बत्ता उनकी कुछ शाखाओं ने बनू बक्र के साथ ठहरना पसंद किया।

बनू तमीम ने बादिया बसरा को अपना वतन बनाया।

बनू सुलैम ने मदीना के क़रीब डेरे डाले। उनके रहने की जगह वादियुल-क़ुरा से शुरू होकर ख़ैबर और मदीना के पूरब से होती हुई हर्रा बनू सुलैम से मिली दो पहाड़ियों पर ख़त्म होती थी।

बनू सक़ीफ़ ने तायफ़ को वतन बना लिया और बनू हवाज़िन ने मक्का के पूरब में औतास घाटी के आस-पास डेरे डाले। उनकी बस्ती मक्का-बसरा मार्ग पर आबाद थी।

बनू असद तैमा के पूरब और कूफ़ा के पच्छिम में ठहर गए। उनके और तैमा के बीच बनू तई का एक ख़ानदान बहतर आबाद था। बनू असद की आबादी और कूफ़ा के बीच पांच दिन की दूरी थी।

बनू जुबयान तैमा के क़रीब हौरान के चारों ओर आबाद हुए।

तिहामा में बनू किनाना के परिवार रह गए थे। इनमें से कुरैशी परिवारों का रहना-सहना मक्का और उसके चारों ओर था। ये लोग बिखरे हुए थे, इनमें कोई ताल-मेल न था, जब तक कि कुसई बिन किलाब उभर कर समाने आया और कुरैशियों को एक करके मान-सम्मान और प्रतिष्ठा व श्रेष्ठता दिलायी।[15]

15) मुहाज़िरातु ख़िज़री 1/15-16

नुबूवत के दौर का अरब

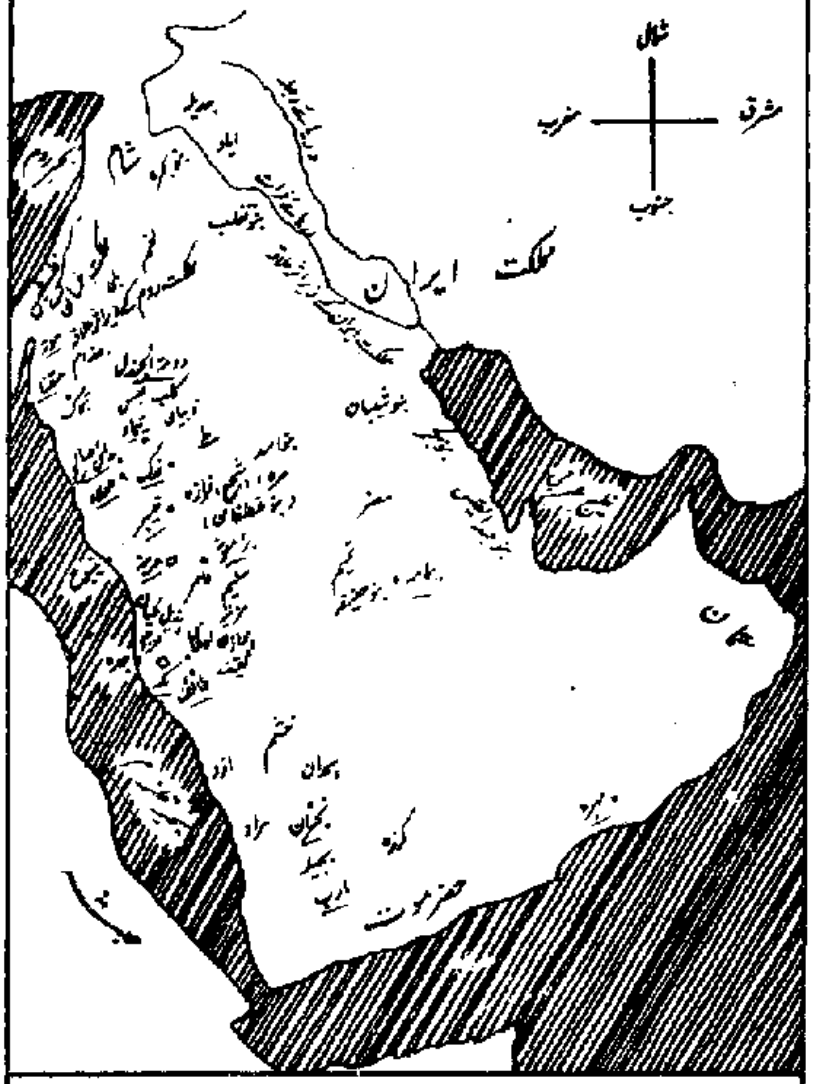

रेखांकित शब्द जगहों के
नाम हैं बाक़ी क़बीलों के नाम हैं।

अ़रब हुकूमतें और सरदारियां

इस्लाम से पहले अरब के जो हालात थे, उनका उल्लेख करते वक़्त मुनासिब मालूम होता है कि वहां की हुकूमतों, सरदारियों और धर्मों का भी एक छोटा सा ख़ाका (परिलेख) सामने लाया जाए, ताकि इस्लाम के ज़ाहिर होने के समय जो हालात थे, वह आसानी से समझ में आ सकें।

जिस वक़्त अरब प्रायद्वीप पर इस्लामी सूरज की चमचमाती किरणें रोशनी डाल रही थीं, वहां दो प्रकार के शासक थे---एक ताज पहने बादशाह, जो वास्तव में पूरी तरह आज़ाद और ख़ुद-मुख़्तार न थे और दूसरे क़बीलों के सरदार जिन्हें अधिकारों और मान-जान की दृष्टि से वही हैसियत हासिल थी जो ताज वाले बादशाहों को हासिल थी। लेकिन उनके अधिकतर लोगों को एक मुख्य बात यह भी मिली हुई थी कि वे पूरे तौर पर स्वाधीन और ख़ुद-मुख़्तार थे। ताज वाले बादशाह ये थे------यमन के बादशाह, आले ग़स्सान के बादशाह (सीरिया) और हियरा (इराक़) के बादशाह। बाक़ी अरब शासक ताजधारी न थे।

यमन की बादशाही

अरब आरबा में से जो सबसे पुरानी क़ौम मालूम हो सकी, वह सबा की क़ौम है। ऊर (इराक़) से जो शिला-लेख मिले हैं, उनमें ढाई हज़ार वर्ष ईसा पूर्व इस क़ौम का वर्णन मिलता है, लेकिन इसकी तरक़्क़ी का ज़माना ग्यारह सदी ईसा पूर्व से शुरू होता है, उसके इतिहास के महत्वपूर्ण युग यह हैं---

1. 650 ईसा पूर्व से पहले का युगः

इस युग में सबा के बादशाहों की उपाधि (लक़ब) मुकर्रबे सबा था। इनकी राजधानी सरवाह थी, जिसके खंडहर आज भी मआरिब के पश्चिम में एक दिन की राह पर पाए जाते हैं और खुरैबा के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसी युग में मआरिब के मशहूर बांध की बुनियाद रखी गयी जिसे यमन के इतिहास में बड़ा महत्व प्राप्त है। कहा जाता है कि इस युग में सबा राज्य को इतनी तरक़्क़ी हुई कि उन्होंने अरब के भीतर और अरब के बाहर जगह-जगह अपनी नव-आबादियां क़ायम कर ली थीं।

2. 650 ईसा पूर्व से 115 ईसा पूर्व तक का युगः

इस युग में सबा के बादशाहों ने मुकर्रब का शब्द छोड़ कर मलिक (बादशाह) की उपाधि अपनायी और सरवाह के बजाए मआरिब को अपनी राजधानी बनाया। इस शहर के खंडहर आज भी सनआ के 60 मील पूरब में पाए जाते हैं।

3. 115 ईसा पूर्व से 300 ई० तक का युगः

इस युग में सबा के राज्य पर क़बीला हिमयर को दबदबा प्राप्त रहा और उसने मआरिब के बजाए रैदान को अपनी राजधानी बनाया। फिर रैदान का नाम ज़िफ़ार पड़ गया। इसके खंडहर आज भी शहर 'यरयम' के क़रीब एक गोल पहाड़ी पर पाए जाते हैं।

यही युग है जिसमें सबा क़ौम का पतन शुरू हुआ। पहले नब्तियों ने उत्तरी हिजाज़ पर अपनी सत्ता जमाई, फिर सबा को उनकी नव-आबादियों से निकाल बाहर किया। फिर रूमियों ने मिसर व शाम (सीरिया) और उत्तरी हिजाज़ पर क़ब्ज़ा करके उनके व्यापार के समुद्री रास्ते को समाप्त कर दिया और इस तरह उनका व्यापार धीरे-धीरे नष्ट हो गया। इधर क़हतानी क़बीले ख़ुद भी आपस में लड़-झगड़ रहे थे। इन

हालात का नतीजा यह हुआ कि क़हतानी क़बीले अपना वतन छोड़कर इधर-उधर बिखर गए।

4. सन् 300 ई० के बाद से इस्लाम के शुरू तक का युग:

इस युग में यमन के भीतर लगातार अशान्ति और बिखराव पाया जाता रहा है। क्रान्तियां आईं, गृह युद्ध हुए और बाहर के देशों को हस्तक्षेप करने के अवसर मिल गए, यहां तक कि एक समय ऐसा भी आया, कि यमन की आज़ादी छिन गयी। चुनांचे यही युग है जिसमें रूमियों ने अदन पर सैनिक क़ब्ज़ा कर लिया और उनकी मदद से हब्शियों ने हिमयर व हमदान के आपसी खिंचाव का फ़ायदा उठाते हुए 340 ई० में पहली बार यमन पर क़ब्ज़ा किया जो 378 ई० तक बाक़ी रहा। इसके बाद यमन की आज़ादी तो बहाल हो गयी, मगर 'मआरिब' के प्रसिद्ध बांध में रुकावटें पड़नी शुरू हो गयीं, यहां तक कि 450 ई० या 451 ई० में बांध टूट गया और वह भारी बाढ़ आयी जिसका उल्लेख क़ुरआन मजीद (सूरः सबा) में सैले अरिम के नाम से किया गया है। यह प्रबल दुर्घटना थी, इसके नतीजे में बस्तियों की बस्तियां वीरान हो गईं और बहुत से क़बीले इधर-उधर बिखर गए।

फिर 523 ई० में एक और संगीन घटना सामने आयी यानी यमन के यहूदी बादशाह ज़ू-नवास ने नजरान के ईसाइयों पर एक भयानक हमला करके उन्हें ईसाई धर्म छोड़ने पर मजबूर करना चाहा और जब वे इस पर तैयार न हुए तो ज़ू-नवास ने खाइयां खुदवा कर उन्हें भड़कती हुई आग के अलाव में झोंक दिया।

क़ुरआन ने सूरः बुरूज की आयतों में इसी कंप-कंपा देने वाली घटना की ओर इशारा किया है। इस घटना का फल यह निकला कि ईसाई धर्म जो रूमी बादशाहों के नेतृत्व में अरब क्षेत्रों की विजयों और प्रचार-प्रसार के लिए पहले ही से चुस्त और तेज़ था, बदला लेने पर तुल गया और हब्शियों को यमन पर आक्रमण करने पर उभारते हुए उन्हें

समुद्री बेड़ा जुटाया। हब्शियों ने रूमियों की शह पाकर 525 ई० में अरयात के नेतृत्व में सत्तर हज़ार की सेना से यमन पर दोबारा क़ब्ज़ा कर लिया। क़ब्ज़े के बाद शुरू में तो हब्श के बादशाह के गवर्नर की हैसियत से अरयात ने यमन पर शासन किया, लेकिन फिर उसकी सेना के एक सहायक कमांडर---अबरहा--ने उसे क़त्ल करके ख़ुद सत्ता पर क़ब्ज़ा कर लिया और हब्श के बादशाह को भी अपने इस क़ब्ज़े पर राज़ी कर लिया।

यह वही अबरहा है जिसने बाद में काबा को ढाने की कोशिश की और एक बड़ी फ़ौज के अलावा कुछ हाथियों को भी चढ़ाई करने के लिए साथ लाया, जिसकी वजह से यह फ़ौज हाथियों वाली (फ़ौज) के नाम से मशहूर हो गई।

इधर हाथियों की इस घटना में हब्शियों की जो तबाही हुई, उससे लाभ उठाते हुए यमन वालों ने फ़ारस की सरकार से मदद मांगी और हब्शियों के ख़िलाफ़ विद्रोह का झंडा उठा कर सैफ़ ज़ी यज़न हिमयरी के बेटे मादीकर्ब की सरदारी में हब्शियों को देश से निकाल बाहर किया और एक आज़ाद क़ौम की हैसियत से मादीकर्ब को अपना बादशाह चुन लिया। यह 575 ई० की घटना है।

आज़ादी के बाद मादीकर्ब ने कुछ हब्शियों को अपनी सेवा और शाही-ज़ीनत के लिए रोक लिया, लेकिन यह शौक़ मंहगा साबित हुआ। इन हब्शियों ने एक दिन मादीकर्ब को धोखे से क़त्ल करके ज़ी यज़न के वंश से शासन का चिराग़ हमेशा के लिए गुल कर दिया। इधर किसरा ने इस स्थिति का फ़ायदा उठाते हुए सनआ पर एक फ़ारसी नस्ल का गवर्नर मुक़र्रर करके यमन को फ़ारस का एक प्रांत बना लिया।

इसके बाद यमन पर एक के बाद एक फ़ारसी गवर्नरों की नियुक्ति होती रही, यहां तक कि आख़िरी गवर्नर बाज़ान ने 628 ई० में इस्लाम अपना लिया और उसके साथ ही यमन फ़ारसी सत्ता से मुक्त होकर

इस्लाम की छत्र-छाया में आ गया।[1]

हियरा की बादशाही

इराक़ और उसके आस-पास के इलाक़ो पर कोरोश कबीर (ख़ोरस या साइरस ज़ुलक़ुरनैन 557 ईसा पूर्व--- 529 ईसा पूर्व) के ज़माने से ही फ़ारस वालों का शासन चला आ रहा था, कोई न था, जो उनके मुकाबले में आने का साहस करता, यहां तक कि 326 ईसा पूर्व में सिकन्दर मक़्दूनी ने दारा प्रथम को हरा कर फ़ारसियों की ताक़त तोड़ दी, जिसके नतीजे में उनका देश टुकड़े-टुकड़े हो गया और बिखराव शुरू हो गया। यह बिखराव 230 ई० तक जारी रहा और इसी बीच क़हतानी क़बीलों ने अपना देश छोड़ कर इराक़ के एक बहुत बड़े हरे-भरे सीमावर्ती क्षेत्र में रहना सहना शुरू किया, फिर वतन छोड़ कर आने वाले अदनानियों का रेला आया और उन्होंने लड़-भिड़ कर फ़रातिया द्वीप के एक भाग को अपने रहने की जगह बना लिया।

इधर 226 ई० में अर्द-शीर ने जब सासानी शासन की बुनियाद रखी, तो धीरे-धीरे फ़ारसियों की ताक़त एक बार फिर पलट आई। अर्द-शीर ने फ़ारसियों को जोड़ने की कोशिश की और अपने देश की सीमा पर आबाद अरबों को अधीन कर लिया। इसी के नतीजे में क़ज़ाआ ने शाम देश का रास्ता पकड़ा। जबकि हियरा और अंबार के अरब निवासियों ने अधीन बनना गवारा कर लिया।

अर्द-शीर के समय में हियरा, बादियतुल इराक़ और द्वीप के रबीआ और मुज़री क़बीलों पर जज़ीमतुल-वज़ाह का शासन था। ऐसा लगता है कि अर्द-शीर ने महसूस कर लिया कि अरब निवासियों पर सीधे-सीधे शासन करना और उन्हें सीमा पर लूट मार से रोके रखना

---

(1) अल्लामा क़ुरआन 1/133 से आख़िर तक मौलवी मुहम्मद सुलैमान नदवी ने क़ौमे सबा के हालात विस्तार से लिखे हैं। मौलवी मौदूदी ने भी तफ़हीमुल-क़ुरआन 4/195-198 पर क़ौम सबा के बारे में लिखा है। लेकिन इतिहास की किताबों में 'सिनीन' के बारे में भिन्नता है।

संभव नहीं, बल्कि उसकी केवल एक ही शक्ल है कि खुद किसी ऐसे अरब को उनका शासक बना दिया जाए, जिसे अपने कुंबे-क़बीले का समर्थन प्राप्त हो। इसका एक फ़ायदा यह भी होगा कि ज़रूरत पड़ने पर रूमियों के ख़िलाफ़ उनसे मदद ली जा सकेगी और सीरिया के रूम पसंद अरब शासकों के मुक़ाबले में इराक़ के इन अरब शासकों को खड़ा किया जा सकेगा।

हियरा के बादशाहों के पास फ़ारसी सेना की एक यूनिट हमेशा रहा करती थी, जिससे देहाती अरब विद्रोहियों के कुचलने का काम लिया जाता था।

सन् 268 ई० में जज़ीमा फ़ौत हो गया और अम्र बिन अदी बिन नसूर लख़्मी उसका उत्तराधिकारी (जानशीं) हुआ। यह क़बीला लख़्म का पहला शासक था और शापुर और अर्द-शीर का समकालीन था। इसके बाद क़बाज़ बिन फ़ीरोज़ के समय तक हियरा पर लख़्मियों का बराबर शासन रहा। क़बाज़ के युग में मुज़दक सामने आया, जो इबाहियत पसन्द था (यानी खुदा का इन्कारी था) क़बाज़ और उसकी बहुत सी प्रजा ने मुज़दक का साथ दिया, फिर क़बाज़ ने हियरा के बादशाह मुंज़िर बिन माउस्समा को संदेश भेजा कि तुम भी यही धर्म अपना लो। मुंज़िर बड़ा स्वाभिमानी था, इंकार कर बैठा। नतीजा यह हुआ कि क़बाज़ ने उसे हटा कर उसकी जगह मुज़दकी सिद्धान्तों पर चलने वाले हारिस बिन अम्र बिन हज्र किन्दी को हियरा का शासन सौंप दिया।

क़बाज़ के बाद फ़ारस की बागडोर किसरा नौशेरवां के हाथ आई। उसे इस मज़हब से बड़ी नफ़रत थी। उसने मुज़दक और उसके साथियों की एक बड़ी तायदाद को क़त्ल कर दिया, मुंज़िर को दोबारा हियरा का शासक बना दिया और हारिस बिन अम्र को अपने यहां बुला भेजा, लेकिन वह बनू कल्ब के इलाक़े में भाग गया और वहीं अपनी ज़िंदगी बिता दी।

मुंज़िर बिन माउस्समा के बाद नोमान बिन मुंज़िर के ज़माने तक हियरा का शासन इसी की नस्ल में चलता रहा, फिर ज़ैद बिन अ़दी इबादी ने किसरा से नोमान बिन मुन्ज़िर की झूठी शिकायत की। किसरा भड़क उठा और नोमान को अपने पास तलब किया। नोमान चुपके से बनू शैबान के सरदार हानी बिन मसऊद के पास पहुंचा और अपने बाल-बच्चों और माल दौलत को उसकी अमानत में देकर किसरा के पास गया। किसरा ने उसे क़ैद कर दिया और वह क़ैद ही में फ़ौत हो गया।

इधर किसरा ने नोमान को क़ैद करने के बाद उसकी जगह इयास बिन क़बीसा ताई को हियरा का शासक बनाया और उसे हुक्म दिया कि हानी बिन मसऊद से नोमान की अमानत तलब करे। हानी स्वाभिमानी था। उसने सिर्फ़ इंकार ही नहीं किया, बल्कि लड़ाई का एलान भी कर दिया। फिर क्या था? इयास अपने साथ किसरा के लाव-लश्कर और मरज़-बानों की जमाअत लेकर रवाना हुआ और ज़ी-क़ार के मैदान में दोनों फ़रीक़ों के दर्मियान घमासान की लड़ाई हुई जिसमें बनू शैबान को जीत मिली। और फ़ारसियों को शर्मनाक हार का सामना करना पड़ा। यह पहला मौक़ा था जब अ़रब ने अ़जम पर विजय प्राप्त की। यह घटना नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जन्म के थोड़े ही दिनों बाद की है। आपका जन्म हियरा पर इयास के शासन के आठवें महीने में हुआ था।

इयास के बाद किसरा ने हियरा पर एक फ़ारसी शासक नियुक्त किया, लेकिन 632 ई० में लख़्मियों की सत्ता फिर बहाल हो गयी और मुन्ज़िर बिन मारूर नामी इस क़बीले के एक आदमी ने बागडोर संभाली, लेकिन अभी उसको सत्ता में आए सिर्फ़ आठ महीने हुए थे कि हज़रत ख़ालिद बिन वलीद रज़ि० इस्लाम की ज़बरदस्त बाढ़ (फ़ौज) लेकर हियरा में दाख़िल हो गये।

शाम (सीरिया) की बादशाही

जिस समय अ़रब क़बीलों की हिजरत ज़ोरों पर थी, क़बीला क़ज़ाआ़ की कुछ शाखाएं शाम (सीरिया) में आकर आबाद हो गईं। उनका ताल्लुक़ बनी सुलैम बिन हलवान से था और उन्हीं में एक शाख बनू ज़जअ़म बिन सुलैम थी, जो ज़जाइमा के नाम से प्रसिद्ध हुई। क़ज़ाआ़ की इस शाखा को रूमियों ने अ़रब रेगिस्तान के बद्दुओं की लूटमार रोकने और फ़ारसियों के ख़िलाफ़ इस्तेमाल करने के लिए अपना साथ देने वाला बनाया और उसी के एक व्यक्ति के सर पर शासन का ताज रख दिया। इसके बाद मुद्दतों उनका शासन रहा। उनका सबसे मशहूर बादशाह ज़ियाद बिन हयूला गुज़रा है। अंदाज़ा किया गया है कि ज़जाइमा का शासन-काल पूरी दूसरी सदी ईसवी पर छाया रहा है। इसके बाद इस इलाक़े में आले ग़स्सान का आना-जाना हुआ और ज़जाइमा का शासन जाता रहा। आले ग़स्सान ने बनू ज़जअ़म को हरा कर उनके सारे हिस्से पर क़ब्ज़ा कर लिया। यह स्थिति देखकर रूमियों ने भी आले ग़स्सान को शाम-क्षेत्र के अरब निवासियों का बादशाह मान लिया। आले ग़स्सान की राजधानी दूमतुल-जन्दल थी और रूमियों के नुमाइन्दे के रूप में शाम क्षेत्र में उनका शासन बराबर चलता रहा, यहां तक कि फ़ारूक़ी ख़िलाफ़त में सन् 13 हि० में यरमूक की लड़ाई हुई और आले ग़स्सान का अन्तिम शासक जबला बिन ऐहम इस्लाम की गोद में आ गया।[2] (यद्यपि उसका ग़ुरूर इस्लामी समता को ज़्यादा दिनों तक सहन न कर सका और वह विधर्मी हो गया)।

हिजाज़ की सरदारी

यह बात तो मशहूर है कि मक्का में आबादी की शुरुआत हज़रत इस्माईल अ़लैहिस्सलाम से हुई। आप ने 137 वर्ष की उम्र पाई।[3] और

2) मुहाज़िरातु ख़िज़री 1/34, अरजुल-क़ुरआन 2/80-82
3) पैदाईश (बाईबल) 25:17

पूरी ज़िंदगी मक्का के सरदार और बैतुल्लाह के मुतवल्ली रहे।[4] आपके बाद आपके दो बेटे——नाबित फिर क़ैदार या क़ैदार फिर नाबित——एक के बाद एक मक्का के सरदार हुए। उनके बाद उनके नाना मज़ाज़ बिन अम्र जुरहमी ने ज़िम्मेदारी अपने हाथ में ले ली। और इस तरह मक्का की सरदारी बनू जुरहम की ओर चली गई और एक मुद्दत तक उन्हीं के हाथ में रही। हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम चूंकि (अपने बाप के साथ मिलकर) बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) की बुनियाद डालने वाले और बनाने वाले थे, इसलिए उनकी औलाद को एक इज़्ज़त वाला मक़ाम ज़रूर हासिल रहा, लेकिन सत्ता और अधिकार में उनका कोई हिस्सा न था।[5]

फिर दिन पर दिन और साल पर साल बीतते गए, लेकिन हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम की औलाद गुमनामी के दौर से न निकल सकी, यहां तक कि बुख़्ते-नस्र के ज़ाहिर होने से कुछ पहले बनू जुरहम की ताक़त कमज़ोर पड़ गयी और मक्का के क्षितिज पर अदनान का राजनीतिक सितारा जगमगाना शुरू हुआ। इसका सबूत यह है कि बुख़्ते-नस्र ने ज़ाते इर्क़ में अरबों से जो लड़ाई लड़ी थी उसमें अरब सेना का सेनापति जुरहमी न था।[6]

फिर बुख़्ते नस्र ने जब 587 ईसा पूर्व में दूसरा हमला किया तो बनू अदनान भाग कर यमन चले गए। उस समय बनू इसराईल के नबी हज़रत यरमियाह थे। वह अदनान के बेटे मअद्द को अपने साथ शाम देश ले गए और जब बुख़्ते-नस्र का ज़ोर ख़त्म हुआ और मअद्द मक्का आए तो उन्हें मक्का में क़बीला जुरहम का केवल एक आदमी जरशम बिन जलहमा मिला। मअद्द ने उसकी लड़की मुआना से शादी की और इसके गर्भ से नज़्ज़ार पैदा हुआ।[7]

4) क़ल्बु जज़ीरतिल-अरब 230-237

5) क़ल्बु जज़ीरतिल-अरब 240 तथा इब्ने हिशाम 1/111-113

6) क़ल्बु जज़ीरतिल-अरब 230

7) रहमतुल-लिल-आलमीन 2/48

इसके बाद मक्का में जुरहम की हालत ख़राब होती गई। उन्हें तंगदस्ती ने आ घेरा। नतीजा यह हुआ कि उन्होंने बैतुल्लाह की ज़ियारत करने वालों पर ज़्यादतियां शुरू कर दीं और ख़ाना-ए-काबा का माल खाने से भी बचाव न किया।[8] इधर बनू अदनान भीतर ही भीतर उनकी हरकतों पर कुढ़ते और भड़कते रहे, इसलिए जब बनू खुज़ाआ ने मर्रज़्ज़हरान में पड़ाव किया और देखा कि बनू अदनान बनू जुरहम से घृणा करते हैं तो इसका फ़ायदा उठाते हुए एक अदनानी क़बीले (बनू बक्र बिन अब्दे मुनाफ़ बिन कनाना) को साथ लेकर बनू जुरहम के ख़िलाफ़ लड़ाई छेड़ दी और उन्हें मक्का से निकाल कर सत्ता पर खुद क़ब्ज़ा कर लिया। यह घटना दूसरी सदी ईसवी के बीच की है।

बनू जुरहम ने मक्का छोड़ते वक़्त ज़मज़म का कुंआ पाट दिया और उसमें कई ऐतिहासिक चीज़ें दफ़न करके उसके निशान भी मिटा दिए। मुहम्मद बिन इसहाक़ का बयान है कि अम्र बिन हारिस बिन मज़ाज़[9] जुरहमी ने ख़ाना-ए-काबा के दोनों हिरन[10] और उसके कोने में लगा हुआ पत्थर---हजरे अस्वद---निकाल कर ज़मज़म के कुंएं में दफ़न कर दिया। और अपने क़बीला बनू जुरहम को साथ लेकर यमन चला गया। बनू जुरहम को मक्का से हटाए जाने और वहां की सत्ता से महरूम होने का बड़ा दुख था,

चुनांचे अम्र ने इसी सिलसिले में ये पद्य कहे---

كان لم يكن بين الحجون إلى الصفا انيس وَ لَمْ يسمر بمكة سامر

بلى نحن كنا اهلها فابادنا صروف الليالي والجدود العواثر[11]

8) क़ल्बु जज़ीरतिल-अरब 231

9) यह वह व्यक्ति नहीं जिसकी चर्चा हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम की कथा में हुई है।

10) मसूदी ने लिखा है फ़ारिस के लोग पिछले युग में ख़ाना-ए-काबा के लिए उपहार आदि भेजते रहते थे साशान बिन बाबक ने सोने के बने हुए दो हिरन, रतन, तलवारें और सोना भेजा था। अम्र ने सब ज़मज़म के कुंए में डाल दिया था (मुरूजुज़-ज़हब 1/205)

11) इब्ने हिशाम 1/114-115

'लगता है हजून से सफ़ा तक कोई जान-पहचान थी ही नहीं और न किसी क़िस्सा कहने वाले ने मक्का की रात की महफ़िलों में क़िस्से कहे। क्यों नहीं! यक़ीनन हम ही इसके निवासी थे, लेकिन समय के चक्करों और टूटे हुए भाग्यों ने हमें उजाड़ फेंका।'

हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम का समय लगभग दो हज़ार वर्ष ईसा पूर्व का है। इस दृष्टि से मक्का में क़बीला जुरहम का वजूद कोई दो हज़ार एक सौ वर्ष रहा और उनका शासन लगभग दो हज़ार वर्ष तक चला।

बनू खुज़ाआ ने मक्का पर क़ब्ज़ा करने के बाद बनू बक्र को शामिल किए बिना अकेले अपना शासन चलाया, अलबत्ता तीन महत्वपूर्ण पद ऐसे थे जो मुज़री क़बीलों के हिस्से में आए।

1. हाजियों को अरफ़ात से मुज़दलफ़ा ले जाना और यौमुन्नफ़रः

13 ज़िलहिज्जा को जो कि हज के सिलसिले का आख़िरी दिन है---मिना से रवाना होने का परवाना देना। यह पद इलयास बिन मुज़र के ख़ानदान बनू ग़ौस बिन मुर्रा को प्राप्त था जो सूफ़ा कहलाते थे। इस पद का विवरण यह है कि 13 ज़िल हिज्जा के हाजी कंकड़ी न मार सकते थे, जब तक कि पहले सूफ़ा का एक-एक आदमी कंकड़ी न मार लेता, फिर हाजी कंकड़ी मार कर फ़ारिग़ हो जाते और मिना से चलने का इरादा करते तो सूफ़ा के लोग मिना के एक ही रास्ते में अक़बा के दोनों तरफ़ घेरा डाल कर खड़े हो जाते और जब तक खुद न गुज़र लेते, किसी को गुज़रने न देते। उनके गुज़र लेने के बाद बाक़ी लोगों के लिए रास्ता ख़ाली होता। जब सूफ़ा ख़त्म हो गए तो यह पद बनू तमीम के एक परिवार बनू सअ़द बिन ज़ैद मुनात को मिल गया।

2. 10 ज़िल हिज्जा की सुबह को मुज़दलफ़ा से मिना की तरफ़ इफ़ाज़ा (रवाना होना):

यह पद बनू उद्वान को प्राप्त था।

3. हराम महीनों को आगे-पीछे करनाः

यह पद बनू कनाना की एक शाख़ा बनू तमीम बिन अदी को प्राप्त था।[12]

मक्का पर बनू खुज़ाआ की सत्ता कोई तीन सौ वर्ष चली।[13] और यही समय था जब अ़दनानी क़बीले मक्का और हिजाज़ से निकल कर नज्द, इराक़ के चारों ओर और बहरैन आदि में फैले और मक्का के चारों ओर सिर्फ़ क़ुरैश की कुछ शाखाएं बाक़ी रहीं, जो ख़ानाबदोश थीं। इनकी अलग अलग टोलियां थीं और बनू कनाना में इनके कुछ बिखरे घराने थे, पर मक्का की हुकूमत और बैतुल्लाह की निगरानी में इनका कोई हिस्सा न था, यहां तक कि कुसई बिन किलाब ज़ाहिर (क़ाबिज़) हुआ।[14]

कुसई के बारे में बताया जाता है कि वो अभी गोद ही में था कि उस के बाप का इंतिक़ाल हो गया। इसके बाद उसकी मां ने बनू उज़रा के एक आदमी रबीआ़ बिन हराम से शादी कर ली। ये क़बीला चूंकि शाम के अतराफ़ में रहता था इसलिए कुसई की मां वहीं चली गयी और वह कुसई को भी अपने साथ लेती गई। जब कुसई जवान हुआ तो मक्का वापस आया। उस वक़्त मक्का का शासक हुलैल बिन जशीया ख़ुज़ाई था। कुसई ने उस के पास उस की बेटी हुब्बी से निकाह का लिए पैग़ाम भेजा। हुलैल ने मंज़ूर कर लिया और शादी कर दी।[15] इसके बाद जब हुलैल का इंतिकाल हुआ तो मक्का और बैतुल्लाह के शासन के लिए खुज़ाआ और क़ुरैश के दरमियान जंग हो गई और इसके नतीजे में मक्का और बैतुल्लाह पर कुसई को अधिकार हासिल हो गया।

लड़ाई की वजह क्या थी? इस बारे में तीन बयान मिलते हैं—

12) इब्ने हिशाम 1/44, 119-122

13) याक़ूत:- मादा मक्का

14) मुहाज़िरातु ख़िज़री 1/35, इब्ने हिशाम 1/117

15) इब्ने हिशाम 1/117-118

एक यह कि जब कुसई की औलाद खूब फल-फूल गयी, उसके पास दौलत की भी ज़्यादती हो गई और उसकी इज़्ज़त भी बढ़ गयी और उधर हुलैल का इंतिकाल हो गया तो कुसई ने महसूस किया कि अब बनू खुज़ाआ और बनू बक्र के बजाए मैं काबा का मुतवल्ली (निगराँ) होने और मक्का की हुकूमत का कहीं ज़्यादा हक़दार हूं। उसे यह एहसास भी था कि कुरैश ख़ालिस इस्माईली अरब हैं और बाक़ी आले इस्माईल के सरदार भी हैं, (इसलिए सरदारी के हक़दार वही हैं) चुनांचे उसने कुरैश और बनू खुज़ाआ के कुछ लोगों से बातें कीं कि क्यों न बनू खुज़ाआ और बनू बक्र को मक्का से निकाल बाहर किया जाए। इन लोगों ने उसकी राय से सहमति बताई।[16]

दूसरा बयान यह है कि ——खुज़ाआ के कहने के मुताबिक़——खुद हुलैल ने कुसई को वसीयत की थी कि वह काबा की निगरानी करेगा और मक्का की बाग-डोर संभालेगा।[17]

तीसरा बयान यह है कि हुलैल ने अपनी बेटी हुब्बी को बैतुल्लाह की देख भाल सौंपी थी और अबू गबसान खुज़ाई को इसका वकील बनाया था, चुनांचे हुब्बी के नायब की हैसियत से वही ख़ाना-ए-काबा की कुंजियों का मालिक था। जब हुलैल का इंतिक़ाल हो गया तो कुसई ने अबू ग़बसान से एक मश्क शराब के बदले काबे का मुतवल्ली (निगराँ) होना ख़रीद लिया, लेकिन खुज़ाआ ने यह ख़रीदना व बेचना मंज़ूर न किया और कुसई को बैतुल्लाह से रोकना चाहा। इस पर कुसई ने बनू खुज़ाआ को मक्का से निकालने के लिए कुरैश और बनू कनाना को जमा किया और वह कुसई की आवाज़ पर लब्बैक कहते हुए जमा हो गए।[18]

---

16) इब्ने हिशाम 1/117-118

17) इब्ने हिशाम 1/117-118

18) रहमतुल-लिल-आलमीन 2/55

बहरहाल वजह जो भी हो, घटनाओं का सिलसिला इस तरह है कि जब हुलैल का इंतिक़ाल हो गया और सूफ़ा ने वही करना चाहा, जो हमेशा करते आए थे, तो कुसई ने कुरैश और कनाना के लोगों को साथ लिया और अक़बा के नज़दीक, जहां वे जमा थे, उनसे आकर कहा कि तुम से ज़्यादा हम इस प्रतिष्ठा के हक़दार हैं, इस पर सूफ़ा ने लड़ाई छेड़ दी, मगर कुसई ने उन पर ग़लबा हासिल करके उनका दर्जा छीन लिया। यही मौक़ा था जब खुज़ाआ और बनू बक्र ने कुसई से दामन छुड़ा लिया। इस पर कुसई ने उन्हें भी ललकारा, फिर क्या था, दोनों फ़रीक़ों में ज़बरदस्त लड़ाई छिड़ गयी और दोनों तरफ़ के बहुत से आदमी मारे गए। इसके बाद समझौते की आवाज़ें बुलन्द हुईं और बनू बक्र के एक आदमी यामर बिन औफ़ को हकम (फ़ैसला करने वाला) बनाया गया। यामर ने फ़ैसला किया कि खुज़ाआ के बजाए कुसई ख़ाना-ए-काबा की निगरानी और सत्ता का ज़्यादा हक़दार है। साथ ही कुसई ने जितना ख़ून बहाया है सब बेकार करार देकर पांव तले रौंद रहा हूं, अल्बत्ता खुज़ाआ और बनू बक्र ने जिन लोगों को क़त्ल किया है, उनकी दियत अदा करें और ख़ाना-ए-काबा को बिना रोक-टोक कुसई के हवाले कर दें। इसी फ़ैसले की वजह से यामर का लक़ब (उपाधि) शद्दाख़ पड़ गया।[19] शद्दाख़ का अर्थ है पांवों तले रौंदने वाला।

इस फ़ैसले के नतीजे में कुसई और कुरैश को मक्का पर पूरी बरतरी और सरदारी मिल गयी। और कुसई बैतुल्लाह का दीनी (धार्मिक) रहनुमा बन गया, जिसके दर्शन के लिए अरब के कोने कोने से आने वालों का तांता बंधा रहता था। मक्का पर कुसई के क़ब्ज़े की यह घटना पांचवी सदी ईसवी के मध्य यानी 440 ई० की है।[20]

---

19) इब्ने हिशाम 1/123-124

20) क़ल्बु जज़ीरतिल अरब 232

कुसई ने मक्का का इंतिज़ाम इस तरह किया कि कुरैश को मक्का के चारों ओर से बुला कर पूरा शहर उन पर बांट दिया और हर परिवार के रहने सहने का ठिकाना मुक़र्रर कर दिया, अलबत्ता महीने आगे पीछे करने वालों को और साथ ही आले सफ़वान, बनू उदवान और बनू मुर्रा बिन औफ़ को उनके पदों पर बाक़ी रखा, क्योंकि कुसई समझता था कि यह भी दीन है जिसमें तब्दीली करना ठीक नहीं।[21]

कुसई का कारनामा यह भी है कि उसने हरमे-काबा के उत्तर में दारुन्नदवा बनाया (इसका दरवाज़ा मस्जिद की ओर था)। दारुन्नदवा असल में कुरैश की पार्लियामेन्ट थी जहां तमाम बड़े-बड़े और अहम मामलों के फ़ैसले होते थे। कुरैश पर दारुन्नदवा के बड़े उपकार हैं, क्योंकि यह उनके एक होने की गारंटी था और यहीं उनके उलझे हुए मामले तय होते थे।[22]

कुसई के बड़कपन के नीचे लिखे सबूत थे–

1. दारुन्नदवा की अध्यक्षताः

जहां बड़े-बड़े मामलों के बारे में मश्वरे होते थे, और जहां लोग अपनी लड़कियों की शादियां भी करते थे।

2. लिवाः

यानी लड़ाई का झंडा कुसई ही के हाथों बांधा जाता था।

3. हिजाबत---- ख़ाना-ए-काबा की निगरानीः

इसका मतलब यह है कि ख़ाना-ए-काबा का दरवाज़ा कुसई ही खोलता था और वही ख़ाना-ए-काबा की सेवा और कुंजी थामने का काम अंजाम देता था।

---

21) इब्ने हिशाम 1/124-125

22) इब्ने हिशाम 1/125,मुहाज़राते ख़िज़री 1/36, अखबारुल-किराम 152

4. सिक़ाया (पानी पिलाना)

इसकी शक्ल यह थी कि हौज़ में हाजियों के लिए पानी भर दिया जाता था और उसमें कुछ खजूर और किशमिश डाल कर उसे मीठा बना दिया जाता था। जब हाजी लोग मक्का आते थे तो उसे पीते थे।[23]

5. रिफ़ादा (हाजियों की मेहमानदारी):

इसका मतलब यह है कि हाजियों के लिए मेहमानदारी के तौर पर खाना तैयार किया जाता था। इस मक़सद के लिए कुसई ने क़ुरैश पर एक ख़ास रक़म मुक़र्रर कर रखी थी जो हज के मौसम में कुसई के पास जमा की जाती थी। कुसई उस रक़म से हाजियों के लिए खाना तैयार कराता था। जो लोग तंग-दस्त होते, या जिनके पास खाने को न होता, वे यही खाना खाते थे।[24]

ये सारे पद कुसई को हासिल थे। कुसई का पहला बेटा अ़ब्दुद्दार था, मगर इसके बजाए दूसरा बेटा अ़ब्दे मुनाफ़, कुसई की ज़िंदगी ही में रहनुमाई के पद पर पहुंच गया था, इसलिए कुसई ने अ़ब्दुद्दार से कहा, कि ये लोग यद्यपि बुज़ुर्गी और रहनुमाई में तुम पर बाज़ी ले जा चुके हैं, मगर मैं तुम्हें इनके बराबर करके रहूंगा। चुनांचे कुसई ने अपने सारे पद और पदवियों की वसीयत अ़ब्दुद्दार के लिए कर दी, यानी दारुन्नदवा की सरदारी, ख़ाना-ए-काबा की निगरानी, देख-भाल, झंडा, पानी और हाजियों की मेहमानदारी सब कुछ अ़ब्दुद्दार को दे दिया, चूंकि किसी काम में कुसई का विरोध नहीं किया जाता था और न उसकी कोई बात रद्द की जाती थी, बल्कि उसका हर फ़ैसला, उसकी ज़िंदगी में भी और उसकी मौत के बाद भी पैरवी के लायक़ दीन समझा जाता था, इसलिए उसकी वफ़ात के बाद उसके बेटों ने किसी विरोध के बिना उसकी

---

23) नुहज़िरातो ख़िज़री 1/36

24) इब्ने हिशाम 1/130

वसीयत क़ायम रखी, लेकिन जब अ़ब्दे मुनाफ़ की वफ़ात हो गयी तो उसके बेटों ने इन पदों के बारे में अपने चचेरे भाइयों यानी अ़ब्दुद्दार की औलाद से झगड़ा किया। इसके नतीजे में क़ुरैश दो गिरोह में बंट गए और क़रीब था कि दोनों में लड़ाई हो जाती, पर फिर उन्होंने समझौते की आवाज़ बुलन्द की और इन पदों को आपस में बांट लिया। चुनांचे पानी पिलाने और मेहमानदारी के पद बनू अ़ब्दे मुनाफ़ को दिए गए और दारुन्नदवा की सरदारी, झंडा और निगरानी बनू अ़ब्दुद्दार के हाथ में रही। फिर बनू अ़ब्दे मुनाफ़ ने अपने हासिल किए हुए पदों के लिए क़ुरआ (फ़ाल) डाला, तो क़ुरआ हाशिम बिन अब्दे मुनाफ़ के नाम निकला, इसलिए हाशिम ही ने अपनी ज़िंदगी भर सिक़ाया व रिफ़ादा का इन्तिज़ाम किया, अलबत्ता जब हाशिम का इंतिक़ाल हो गया तो उनके भाई मुत्तलिब ने उनकी जानशीनी की, मगर मुत्तलिब के बाद उनके भतीजे अ़ब्दुल मुत्तलिब बिन हाशिम ने------जो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दादा थे----यह मंसब (पदभार) संभाल लिया और उनके बाद उनकी औलाद उनकी जानशीं हुई, यहां तक कि जब इस्लाम का दौर आया तो हज़रत अ़ब्बास बिन अ़ब्दुल मुत्तलिब इस पद पर मौजूद थे।[26]

इनके अ़लावा कुछ और पद भी थे जिन्हें क़ुरैश ने आपस में बांट रखे थे। इन पदों और प्रबन्धों द्वारा क़ुरैश ने एक छोटा सा राज---- बल्कि सरकार जैसा प्रशासन---स्थापित कर रखा था, जिसकी सरकारी संस्थाएं और संगठन कुछ इसी ढंग के थे जैसे आज की पार्लियामेन्ट्री सभाएं और संस्थाएं हुआ करती हैं। इन पदों की रूप-रेखा नीचे दी जा रही है।

---

26) इब्ने हिशाम पुस्तक 1/129

1. ऐसारः

यानी फ़ाल निकालने और भाग्य मालूम करने के लिए मूर्तियों के पास जो तीर रखे रहते थे, उनकी देख-रेख——यह पद बनू जमह को प्राप्त था।

2. धन-सम्पत्ति

यानी मूर्तियों के क़रीब होने के लिए जो चढ़ावे और क़ुरबानियां पेश की जाती थीं, उनकी व्यवस्था करना, साथ ही झगड़ों और मुक़दमों का फ़ैसला करना, यह काम बनू सहम को सौंपा गया था।

3. शूराः

यह पद बनू असद को प्राप्त था।

4. अश्नाक़ः

यानी बदले और जुर्माने की व्यवस्था। इस पद पर बनू तैम आसीन थे।

5. उक़ाबः

यानी राष्ट्रीय-ध्वज उठाने की ज़िम्मेदारी बनू उमैया की थी।

6. क़ुब्बाः

यानी सैनिक कैम्प की व्यवस्था और घुड़सवारों का नेतृत्व, यह बनू मख़्ज़ूम के हिस्से में आया था।

7. सिफ़ारतः

बनू अदी का पद था।[26]

---

26) तारीख़े अरजुल-क़ुरआन 2/104-106

बाक़ी अ़रब सरदारियां

हम पिछले पृष्ठों में क़हतानी और अ़दनानी क़बीलों के वतन (स्वदेश) छोड़ने का उल्लेख कर चुके हैं और बतला चुके हैं कि पूरा अ़रब देश इन क़बीलों में बंट गया था, इसके बाद उनकी सरदारियों का ख़ाका कुछ यूं था कि जो हियरा क़बीलों के आस-पास आबाद थे, उन्हें हियरा शासकों के अधीन माना गया और जिन क़बीलों ने बादियतुश्शाम में रहना शुरू कर दिया था, उन्हें ग़स्सानी शासकों के अधीन माना गया, मगर यह मातहती सिर्फ़ नाम की थी, व्यवहारिक न थी। इन दो जगहों को छोड़ कर अरब के भीतर आबाद क़बीले आज़ाद थे।

इन क़बीलों में सरदारी व्यवस्था चल रही थी। क़बीले ख़ुद अपना सरदार तय करते थे और इन सरदारों के लिए इनका क़बीला एक छोटा सा राज्य हुआ करता था। राजनीतिक अस्तित्व और सुरक्षा की बुनियाद, क़बीलों की एकता पर आधारित पक्षपात और अपने भू-भाग की सुरक्षा, के मिले जुले स्वार्थ थे।

कबीलों के सरदारों का दर्जा अपनी क़ौम में बादशाहों जैसा था। क़बीला सुलह और युद्ध में बहरहाल अपने सरदार के फ़ैसले के अधीन होता था और किसी हाल में उससे अलग-थलग नहीं रह सकता था। सरदार को वही मन-मानी करने और ज़ुल्म ढाने का हक़ हासिल था, जो किसी डिक्टेटर को हासिल हुआ करता है, यहां तक कि कुछ सरदारों का यह हाल था कि अगर वे बिगड़ जाते तो हज़ारों तलवारें यह पूछे बिना नंगी होकर निकल आतीं कि सरदार के ग़ुस्से की वजह क्या है? फिर भी चूंकि एक ही कुंबे के चचेरे भाइयों में सरदारी के लिए खींचातानी भी हुआ करती थी, इसलिए इसका तक़ाज़ा था कि सरदार अपने क़बीले के जन-साधारण के प्रति उदारता दिखाए, ख़ूब माल ख़र्च करे, मेहमानों की आवभगत में आगे-आगे रहे। दया-भाव और उदारता से काम ले, वीरता का व्यवहारिक प्रदर्शन करे और स्वाभिमान की रक्षा करे, ताकि लोगों की

नज़र में आम तौर से और कवियों की नज़र में ख़ास-तौर से गुणों और विशेषताओं का योग बन जाए, (क्योंकि कवि उस युग में क़बीले का मुख हुआ करता था) और इस तरह सरदार अपने मुक़ाबले के लोगों से ऊंचा दर्जा हासिल कर ले।

सरदारों के कुछ विशेष अधिकार भी हुआ करते थे जिन्हें एक कवि ने यूँ बताया हैं---

لک المرباع فینا و الصفایا وحکمک والنشیطة والفضول

'हमारे बीच तुम्हारे लिए माले ग़नीमत का चौथाई है और चुना हुआ माल है और वह माल है जिसका तुम फ़ैसला कर दो और जो राह चलते हाथ आ जाए और जो बांटे जाने से बच रहे।

मिरबाअ़ः

ग़नीमत के माल का चौथाई हिस्सा,

सफ़ीः

वह माल जिसे बांटने से पहले ही सरदार अपने लिए चुन ले।

नशीताः

वह माल जो असल क़ौम तक पहुंचने से पहले रास्ते ही में सरदार के हाथ लग जाए।

फ़ुज़ूलः

वह माल जो बांटने के बाद बच रहे और ग़ाज़ियों (योद्धाओं) की तायदाद पर बराबर न बंट सके। जैसे बंटने से बचे हुए ऊंट घोड़े वग़ैरह, इन सब क़िस्मों के माल पर क़बीले के सरदार का हक़ हुआ करता था।

राजनीतिक स्थिति

अ़रब प्रायद्वीप के शासकों का उल्लेख हो चुका। अनुचित न होगा कि अब उन की कुछ राजनीतिक परिस्थितियों का भी उल्लेख कर दिया जाए।

अ़रब प्रायद्वीप के वे तीनों सीमावर्ती क्षेत्र जो अन्य देशों के पड़ोस में पड़ते थे, उनकी राजनीतिक स्थिति, बड़े बिखराव, अशान्ति और पतन व गिरावट का शिकार थी। इंसान स्वामी और दास या शासक और शासित के दो वर्गों में बंटा हुआ था। सारे फ़ायदे शासकों---और मुख्य रूप से विदेशी शासकों---को मिले हुए थे और सारा बोझ दासों के सर था। इससे अधिक खुले शब्दों में यूं कहा जा सकता है कि प्रजा हक़ीक़त में एक खेती थी जो शासन के लिए टैक्स और आमदनी जुटाती थी और शासन उसे स्वादों, इच्छाओं, सुख-वैभव और ज़ुल्म व ज़्यादती के लिए इस्तेमाल करती थीं। प्रजा अपने आप में हाथ-पांव मार रहे थे और उन पर हर ओर से ज़ुल्म की वर्षा हो रही थी। पर शिकायत का कोई अक्षर वे मुख पर न ला सकते थे, बल्कि ज़रूरी था कि तरह-तरह का अपमान, निरादर और दमन व आत्याचार सहन करें और ज़ुबान बंद रखें, क्योंकि ज़ुल्म व जब्र की हुकूमरानी थी और मानवाधिकार नाम की किसी चीज़ का कहीं कोई अस्तित्व न था।

इन इलाक़ों के पड़ोस में रहने वाले क़बीले अनिश्चितता के शिकार थे। उन्हें स्वार्थ और इच्छाएं इधर से उधर और उधर से इधर फेंकती रहती थीं। कभी वे इराक़ियों की आवाज़ में आवाज़ मिलाते थे और कभी शामियों (सीरिया वालों) की हां में हां मिलाते थे।

जो क़बीले अ़रब के अन्दर आबाद थे, उनके भी जोड़ ढीले थे और वे भी बिखराव के शिकार थे। हर ओर क़बीलों के आपसी झगड़ों, नस्ली दंगों और धार्मिक मतभेदों की गर्मबाज़ारी थी, जिसमें क़बीले के लोग हर हाल में अपने-अपने क़बीले का साथ देते थे, चाहे वे हक़ पर हों या न हों, चुनांचे उनका एक तर्जुमान (दूत) कहता है---

وَمَا أَنَا إِلاَّ مِنْ غَزِيَّةَ إِنْ غَوَتْ غَوَيْتُ، وَإِنْ تَرْشُدْ غَزِيَّةُ أَرْشُدِ

'मैं भी तो क़बीला ग़ज़ीया ही का एक व्यक्ति हूं। अगर वह ग़लत रास्ते पर चलेगा तो मैं भी ग़लत रास्ते पर चलूंगा और अगर वह सही रास्ते पर चलेगा तो मैं भी सही रास्ते पर चलूंगा।'

अरब में कोई ऐसा बादशाह न था जो उनकी आवाज़ को ताक़त पहुंचाता और न कोई ऐसा था जिसकी ओर कठिनाइयों और परेशानियों में रुजू (याद) किया जाता और जिसपर वक़्त पड़ने पर भरोसा किया जाता।

हां, हिजाज़ की सरकार को मान-सम्मान की निगाह से निश्चित रूप से देखा जाता था। और उसे धर्म-केन्द्र का निगरां और रहनुमा भी समझा जाता था। यह सरकार एक प्रकार से सांसारिक-नेतृत्व और धार्मिक-अगुवाई का योग था। इसे अरबों पर धार्मिक-नेतृत्व के नाम से सत्तासीन (बालादस्त) थे और हरम और उसके आस-पास के क्षेत्रों पर इसका नियमित शासन था। वही अल्लाह के घर के दर्शनार्थियों की ज़रुरतों का इन्तिज़ाम और इब्राहीमी शरीअ़त के हुक्मों को लागू करती थी और उसके पास पार्लीमानी संस्थाएं और संगठन भी थे। लेकिन यह शासन इतना कमज़ोर था कि अ़रब के भीतर की ज़िम्मेदारियों का बोझ उठाने की ताक़त न रखता था, जैसा कि हब्शियों के हमले के मौक़े पर ज़ाहिर हुआ।

अ़रब के दीन और धर्म

अ़रब निवासी आ़मतौर से हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम की दावत व तब्लीग़ के नतीजे में इब्राहीमी दीन की पैरवी करने वाले थे, इसलिए सिर्फ़ अल्लाह की इबादत करते थे और तौहीद (एकेश्वरवाद) पर चल रहे थे, लेकिन समय बीतने के साथ-साथ उन्होंने एक अल्लाह का पाठ भुला दिया। फिर भी उनके अन्दर तौहीद और इब्राहीमी दीन की कुछ निशानियां बाक़ी रहीं, यहां तक कि बनू ख़ुज़ाआ़ का सरदार अ़म्र बिन लुहई सामने आया। उसका पालन-पोषण बड़े नेक कामों, सदक़ा व ख़ैरात और दीनी मामलों से गहरी दिलचस्पी पर हुआ था, इसलिए लोगों ने उसे मुहब्बत की नज़र से देखा और उसे बड़े उलेमा और बुज़ुर्ग औलिया में से समझ कर उसकी पैरवी की। फिर इस आदमी ने शाम देश की यात्रा की, देखा तो वहां मूर्तियों की पूजा की जा रही थी। उसने समझा कि यह भी बेहतर और हक़ है, क्योंकि शाम देश पैग़म्बरों की धरती और आसमानी किताबों के उतरने की जगह थी, चुनांचे वह अपने साथ हुबल बुत भी ले आया और उसे ख़ाना-ए-काबा के अंदर गाड़ दिया और मक्का वालों को अल्लाह के साथ शिर्क की दावत दी। मक्का वालों ने उसे मान लिया। इसके बाद हिजाज़ निवासी भी मक्का वालों के पद-चिन्हों पर चल पड़े, क्योंकि वे अल्लाह के घर के निगरां और हरम के बाशिंदे थे।[1] इस तरह अरब में मूर्ति-पूजा आरम्भ हुई।

---

1) मुख़्तसर सीरतुर-रसूल (शेख़ अब्दुल-वहाब)12

हुबल के अ़लावा अ़रब के सब से पुराने बुतों (मूर्तियों) में से मुनात है। यह लाल-सागर के तट पर कुदैद के क़रीब मुशल्लल में गड़ा हुआ था।[2]

इसके बाद ताइफ़ में लात नामक बुत (मूर्ति) वजूद में आया। फिर नख़ला घाटी में उज़्ज़ा का बुत सामने आया। यह तीनों अरब के सबसे बड़े बुत थे। इसके बाद हिजाज़ के हर क्षेत्र में शिरक की ज़्यादती और बुतों की भरमार हो गयी। कहा जाता है कि एक जिन्न अ़म्र बिन लुहई के आधीन था। उसने बताया कि नूह क़ौम के बुत—यानी वद्द, सुवाअ़, यग़ूस, यऊक़ और नसूर—जद्दा में दफ़न हैं। इस ख़बर पर अ़म्र बिन लुहई जद्दा गया और इन बुतों को खोद निकाला, फिर उन्हें तिहामा लाया और जब हज का ज़माना आया तो इन्हें अलग-अलग क़बीलों के हवाले किया। ये क़बीले इन बुतों को अपने-अपने क्षेत्रों में ले गए। इस तरह हर-हर क़बीले में फिर हर-हर घर में एक बुत हो गया।

फिर मुश्रिकों ने मस्जिदे हराम को भी बुतों से भर दिया। चुनांचे जब मक्का जीत लिया गया, तो बैतुल्लाह के चारों ओर तीन सौ साठ बुत थे, जिन्हें अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने मुबारक हाथों से तोड़ा। आप हर एक को छड़ी से ठोकर मारते जाते थे और वह गिरता जाता था। फिर आपने हुक्म दिया और इन सारे बुतों को मस्जिदे हराम से बाहर निकाल कर जला दिया गया।[3]

ग़रज़ शिर्क और बुत-परस्ती जाहिलियत (अज्ञानता) वालों के लिये दीन की सब से बड़ी निशानी बन गयी थी, जिन्हें घमंड था कि वे हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के दीन पर हैं।

---

2) बुख़ारी 1/22

3) मुख़्तसर सीरतुर-रसूल(शेख़ अब्दुल-वहाब) 13,50,51,52,54

फिर अज्ञानता युग में उनके यहां बुत-परस्ती के कुछ ख़ास तरीके और रस्में भी रिवाज में थीं जो ज़्यादातर अम्र बिन लुहई की गढ़ी हुई थी। अज्ञानता युग के लोग समझते थे कि अम्र बिन लुहई की गढ़ी हुई बातें दीने इब्राहीमी में तब्दीली नहीं, बल्कि अच्छी बातें है। नीचे हम जाहिलियत युग के लोगों में भीतर चल रही बुत-परस्ती की कुछ अहम रस्मों का ज़िक्र करते हैं।

1. जाहिलियत के समय के मुश्रिक बुतों (मूर्तियों) के पास मुजाविर बन कर बैठते थे उनकी शरण खोजते थे। उन्हें ज़ोर-ज़ोर से पुकारते थे और ज़रूरतें पूरी करने और कठिनाईयां दूर करने के लिए उनसे फ़रियादें और दुआएं करते थे और समझते थे कि वे अल्लाह से सिफ़ारिश करके हमारी मुराद पूरी करा देंगे।

2. बुतों का हज व तवाफ़ करते थे। उनके सामने विनम्रता से पेश आते थे और उन्हें सज्दा करते थे।

3. बुतों के लिए नज़राने और कुर्बानियाँ पेश करते और कुर्बानी के इन जानवरों को कभी बुतों के आस्ताने पर ले जा कर ज़िब्ह करते थे और कभी कहीं भी ज़िब्ह कर लेते थे मगर बुतों के नाम पर ज़िब्ह करते थे। ज़िब्ह की इन दोनों शक्लों का उल्लेख अल्लाह ने कुरआन में किया है। इर्शाद है, وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ (5:3) यानी वे जानवर भी हराम हैं जो आस्तानों पर ज़िब्ह किए गए हों। दूसरी जगह इर्शाद है, وَلَا تَأْكُلُوا مِمَّا لَمْ يُذْكَرِ اسْمُ اللَّهِ عَلَيْهِ (6:121) यानी उस जानवर का मांस मत खाओ जिसपर अल्लाह का नाम न लिया गया हो।

4. बुतों से क़रीब होने का एक तरीक़ा यह भी था कि मुश्रिक अपने हिसाब से अपने खाने-पीने की चीज़ों और अपनी खेती और चौपाए की पैदावार का एक हिस्सा बुतों के लिए ख़ास कर देते थे। इस संबंध में उनकी रोचक रीति यह थी कि वे अल्लाह के लिए भी अपनी खेती और जानवरों की पैदावार का एक हिस्सा ख़ास करते थे, फिर

अनेकों कारणों से अल्लाह का हिस्सा तो बुतों की तरफ़ कर सकते थे, लेकिन बुतों का हिस्सा किसी भी हाल में अल्लाह की ओर नहीं कर सकते थे। अल्लाह का इर्शाद है---

وَجَعَلُوا لِلّٰهِ مِمَّا ذَرَأَ مِنَ الْحَرْثِ وَالْأَنْعَامِ نَصِيبًا فَقَالُوا هٰذَا لِلّٰهِ بِزَعْمِهِمْ وَهٰذَا لِشُرَكَائِنَا فَمَا كَانَ لِشُرَكَائِهِمْ فَلَا يَصِلُ إِلَى اللّٰهِ وَمَا كَانَ لِلّٰهِ فَهُوَ يَصِلُ إِلَى شُرَكَائِهِمْ سَاءَ مَا يَحْكُمُونَ

"अल्लाह ने जो खेती और चौपाए पैदा किए हैं उनका एक हिस्सा उन्होंने अल्लाह के लिए मुक़र्रर किया और कहा, यह अल्लाह के लिए है--- उनके विचार में--- और यह हमारे शरीकों के लिए हैं तो जो उनके शरीकों के लिए होता है, वह तो अल्लाह तक नहीं पहुंचता (मगर) जो अल्लाह के लिए होता है, वह उनके शरीकों तक पहुंच जाता है। कितना बुरा है वह फ़ैसला जो ये लोग करते हैं?" (6:136)

5. बुतों के क़रीब होने का एक तरीक़ा यह भी था कि मुश्रिक खेती और चौपाए में अलग-अलग क़िस्म की नज़्रें मानते थे। अल्लाह का इर्शाद है---

وَقَالُوا هٰذِهِ أَنْعَامٌ وَحَرْثٌ حِجْرٌ لَا يَطْعَمُهَا إِلَّا مَنْ نَشَاءُ بِزَعْمِهِمْ وَأَنْعَامٌ حُرِّمَتْ ظُهُورُهَا وَأَنْعَامٌ لَا يَذْكُرُونَ اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهَا افْتِرَاءً عَلَيْهِ

"इन मुश्रिकों ने कहा कि ये चौपाए और खेतियां मना की गई हैं उन्हें वही खा सकता है, जिसे हम चाहें। उनके विचार से---और ये वह चौपाए है जिनकी पीठ हराम की गई है (न उन पर सवारी की जा सकती है न सामान लादा जा सकता है) और कुछ चौपाए ऐसे हैं जिन पर ये लोग अल्लाह पर झूठ गढ़ते हुए----अल्लाह का नाम नहीं लेते।" (6:138)

6. इन्हीं जानवरों में बहीरा, साइबा, वसीला और हामी थे। इब्ने इस्हाक़ कहते है कि बहीरा, साइबा की बच्ची को कहा जाता है और

साइबा उस ऊंटनी को कहा जाता है, जिससे दस बार लगातार मादा बच्चे पैदा हों, बीच में कोई नर न पैदा हो। ऐसी ऊंटनी को आज़ाद छोड़ दिया जाता था, उस पर सवारी नहीं की जाती थी, उसके बाल नहीं काटे जाते थे और मेहमान के सिवा कोई उसका दूध नहीं पीता था। इसके बाद यह ऊंटनी जो मादा बच्चे जनती, उसका कान चीर दिया जाता और उसे भी उसकी मां के साथ आज़ाद छोड़ दिया जाता, उस पर सवारी न की जाती, उसका बाल न काटा जाता और मेहमान के सिवा कोई उसका दूध न पीता। यही बहीरा है और इसकी मां साइबा है।

वसीला उस बकरी को कहा जाता था, जो पांच बार दो-दो मादा बच्चे जने (यानी पांच बार में दस मादा बच्चे पैदा हों) बीच में कोई नर न पैदा हो। उस बकरी को इसलिए वसीला कहा जाता था कि वह सारे मादा बच्चों को एक दूसरे से जोड़ देती थी। इसके बाद उस बकरी से जो बच्चे पैदा होते, उन्हें सिर्फ़ मर्द खा सकते थे, औरतें नहीं खा सकती थीं, अलबत्ता अगर कोई बच्चा मुर्दा पैदा होता, तो उसको मर्द और औरत सभी खा सकते थे।

हामी उस नर ऊंट को कहते हैं जिसके जोड़ी खाने से लगातार दस मादा बच्चे पैदा होते, बीच में कोई नर न पैदा होता। ऐसे ऊंट की पीठ सुरक्षित कर दी जाती थी, न उसपर सवारी की जाती थी, न उसका बाल काटा जाता था, बल्कि उसे ऊंटों के रेवड़ में जोड़ा खाने के लिए आज़ाद छोड़ दिया जाता था, और इसके सिवा कोई दूसरा फ़ायदा न उठाया जाता था। अज्ञानता युग की मूर्ति-पूजा के इन तरीक़ों का खंडन करते हुए अल्लाह ने फ़रमाया—

مَا جَعَلَ اللّٰهُ مِن بَحِيرَةٍ وَّلَا سَآئِبَةٍ وَّلَا وَصِيلَةٍ وَّلَا حَامٍ وَّلٰكِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا
يَفْتَرُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ ۚ وَأَكْثَرُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ

"अल्लाह ने न कोई बहीरा, न कोई साइबा, न कोई वसीला और

न कोई हामी बनाया है, लेकिन जिन लोगों ने कुफ़्र किया, वे अल्लाह पर झूठ गढ़ते हैं और उनमें से अक्सर बुद्धि नहीं रखते।" (5:103)

एक दूसरी जगह फ़रमाया---

وَقَالُوا مَا فِي بُطُونِ هَٰذِهِ الْأَنْعَامِ خَالِصَةٌ لِّذُكُورِنَا وَمُحَرَّمٌ عَلَىٰ أَزْوَاجِنَا
وَإِن يَكُن مَّيْتَةً فَهُمْ فِيهِ شُرَكَاءُ

"इन (मुश्रिकों) ने कहा कि इन चौपायों के पेट में जो कुछ है, वह ख़ालिस हमारे मर्दों के लिए है और हमारी औरतों पर हराम है, अलबत्ता अगर वह मुर्दा हो तो उसमें मर्द और औरत सब शरीक हैं।" (6:139)

चौपायों की बताई गई क़िस्में यानी बहीरा, साइबा वग़ैरह के कुछ दूसरे अर्थ भी बताए गए हैं[4] जो इब्ने इसहाक़ के बयान की गई तफ़्सीर से कुछ हद तक अलग हैं---

हज़रत सईद बिन मुसय्यब रह० का बयान है, ये जानवर उनके तग़ूतों (झूठे ख़ुदाओं) के लिए थे।[5] और सहीह बुख़ारी की रिवायत में है कि अम्र बिन लुहई पहला आदमी है जिसने मूर्तियों के नाम पर जानवर छोड़े।[6]

अरब अपनी मूर्तियों के साथ यह सब कुछ इस अक़ीदे के साथ करते थे कि ये बुत उन्हें अल्लाह के क़रीब कर देंगे और अल्लाह के हुज़ूर उनकी सिफ़ारिश कर देंगे, चुनांचे क़ुरआन मजीद में बताया गया है कि मुश्रिक कहते थे-----

مَا نَعْبُدُهُمْ إِلَّا لِيُقَرِّبُونَا إِلَى اللَّهِ زُلْفَىٰ

"हम उनकी इबादत सिर्फ़ इसलिए कर रहे हैं कि वे हमें अल्लाह से क़रीब कर दें।" (39:3)

4) इब्ने हिशाम 1/89,90
5) बुख़ारी 1/499
6) बुख़ारी 1/499

وَيَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللَّهِ مَا لَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ وَيَقُولُونَ هَٰؤُلَاءِ شُفَعَاؤُنَا عِنْدَ اللَّهِ

"ये मुश्रिक अल्लाह के सिवा उनकी इबादत करते हैं जो उन्हें न नफ़ा पहुंचा सकें, न नुक़्सान और कहते हैं कि ये अल्लाह के पास हमारे सिफ़ारिशी हैं।" (10:18)

अरब के मुश्रिक अज़लाम यानी फ़ाल के तीर भी इस्तेमाल करते थे। (अज़लाम बहुवचन है ज़लम की और ज़लम उस तीर को कहते हैं जिसमें पर न लगे हों) शकुन के लिए इस्तेमाल होने वाले ये तीर तीन प्रकार के होते थे—

एकः वह जिस पर सिर्फ़ 'हां' या 'नहीं' लिखा होता था। इस तरह के तीर सफ़र और निकाह वग़ैरह जैसे कामों के लिए इस्तेमाल किए जाते थे, अगर फ़ाल में 'हां' निकलता तो काम कर डाला जाता, और अगर 'नहीं' निकलता तो साल भर के लिए स्थगित कर दिया जाता और आगे फिर शकुन निकाली जाती।

दूसरीः क़िस्म वह थी, जिस पर पानी और दियत (देनदारी की चीज़ें) वग़ैरह लिखी होती थीं, और

तीसरीः क़िस्म वह थी जिस पर यह लिखा होता था कि 'तुम में से है' या 'तुम्हारे अलावा से है' या 'मिला हुआ है'।

इन तीरों का इस्तेमाल यह था कि जब किसी के वंश में संदेह होता तो उसे एक सौ ऊंटों सहित हुबल के पास ले जाते, ऊंटों को तीर वाले महन्त के हवाले करते और वह तमाम तीरों को एक साथ मिला कर घुमाता-झिंझोड़ता, फिर एक तीर निकालता। अब अगर यह निकलता कि, 'तुम में से है' तो वह इनके क़बीले का मान्य व्यक्ति समझा जाता और यह निकलता कि 'तुम्हारे ग़ैर (पराए) से है' तो हलीफ़ (जिससे समझौता हो) और अगर यह निकलता कि 'मुलहिक़ (मिला हुआ) से है' तो उनके भीतर अपनी हैसियत पर बाक़ी रहता, न-क़बीले का व्यक्ति

माना जाता, न हलीफ़।[7]

इसी से मिलता-जुलता एक रिवाज मुश्रिकों में जुआ खेलने और जुए के तीर इस्तेमाल करने का था। इसी तीर की निशानदही पर वे जुए का ऊंट ज़िब्ह करके उसका मांस बांटते थे।[8]

अरब के मुश्रिक काहिनों, अर्राफ़ों और नजूमियों की ख़बरों पर भी ईमान रखते थे। काहिन उसे कहते हैं जो आने वाली घटनाओं की भविष्यवाणी करे, और छिपे रहस्यों को जानने का दावेदार हो। कुछ काहिनों का यह भी दावा था कि एक जिन्न उनके अधीन है जो उन्हें ख़बरें पहुंचाता रहता है और कुछ काहिन कहते थे कि उन्हें ऐसी समझ दी गयी है, जिससे वे ग़ैब का पता लगा लेते हैं। कुछ इसके दावेदार थे कि जो आदमी उनसे कोई बात पूछने आता है उसकी कथनी-करनी से या उसकी हालत से, कुछ बातों और वजहों के ज़रिए वारदात (घटनाओं) की जगहों का पता लगा लेते हैं, इस क़िस्म के आदमी को अर्राफ़ कहा जाता था, जैसे वह आदमी जो चोरी के माल और चोरी की जगह और गुमशुदा जानवर वग़ैरह का पता-ठिकाना बताता।

नजूमी उसे कहते हैं जो तारों पर विचार करके और उनकी चाल और वक़्तों का हिसाब लगा कर पता लगाता है कि दुनिया में क्या हालात पैदा होने वाले हैं और कौन सी घटनाएं घटित होने वाली हैं[9] इन नजूमियों की ख़बरों को मानना असल में तारों पर ईमान लाना है और तारों पर ईमान लाने की एक शक्ल यह भी थी कि अरब के मुश्रिक

7) मुहाज़िराते ख़िज़री 1/56,इब्ने हिशाम 1/102-103

8) इसका तरीक़ा यह था कि जुआ खेलने वाले एक ऊंट काट कर उसके 10 या 28 भाग लगाते। फिर तीरों से लाटरी निकालते किसी तीर पर जीत का निशान होता और कोई तीर बिला निशान के। जिसके नाम पर निशान वाला तीर निकलता वह सफ़ल माना जाता और अपना हिस्सा लेता और जिसके नाम बिला निशान वाला तीर निकलता उसे क़ीमत देनी पड़ती।

9) मिरआतुल-मफ़ातीह 2/302 लखनऊ मुद्रण

नक्षत्रों पर ईमान रखते थे और कहते थे कि हम पर फ़्लां और फ़्लां नक्षत्र से वर्षा हुई है।[10]

मुश्रिकों में अपशगुन की भी रस्म थी। इसे अ़रबी में तियर: कहते हैं। इसकी शक्ल यह थी कि मुश्रिक किसी चिड़िया या हिरन के पास जाकर उसे भगाते थे। फिर अगर वह दाहिनी ओर भागता, तो उसे अच्छाई और कामियाबी की निशानी समझ कर अपना काम कर गुज़रते और अगर बाईं ओर भागता तो उसे दुर्भाग्य की निशानी समझ कर अपने काम से बाज़ (रुके) रहते। इसी तरह अगर कोई चिड़िया या जानवर रास्ता काट देता तो उसे भी मनहूस समझते।

इसी से मिलती जुलती एक हरकत यह भी थी कि मुश्रिक लोग ख़रगोश के टख़ने की हड्डी लटकाते थे और कुछ दिनों, महीनों, जानवरों, घरों और औरतों को मनहूस समझते थे। बीमारियों की छूत के क़ायल थे और रूह के उल्लू बन जाने का अ़क़ीदा रखते थे। यानी उनका अ़क़ीदा था कि जब तक मक़्तूल (क़त्ल किए गए व्यक्ति) का बदला न लिया जाए, उसको शान्ति नहीं मिलती और उसकी रूह उल्लू बन कर वीरानों में घूमती रहती है और 'प्यास-प्यास' या 'मुझे पिलाओ, मुझे पिलाओ' की आवाज़ लगाती रहती है। जब उसका बदला ले लिया जाता है तो उसे आराम और सुकून मिल जाता है।[11]

इब्राहीमी दीन में क़ुरैश की बिदअ़तें

ये थे जाहिलियत युग के लोगों अक़ीदे और अ़मल, उनके साथ ही उनके अंदर इब्राहीमी दीन की कुछ बातें बाक़ी भी थीं, यानी उन्होंने यह दीन पूरे तौर पर नहीं छोड़ा था, चुनांचे वे बैतुल्लाह का पूरा सम्मान करते और उसका तवाफ़ करते थे, हज व उमरा करते थे, अ़रफ़ात व

10) देखिए मुस्लिम किताबुल-ईमान 1/95
11) बुख़ारी 2/851,857

मुज़दलफ़ा में ठहरते थे और हदय के जानवरों की क़ुरबानी करते थे, अलबत्ता उन्होंने इस इब्राहीमी दीन में बहुत सी बिदअ़तें ईजाद करके शामिल कर दी थीं। जैसे—

क़ुरैश की एक बिदअ़त यह थी कि वे कहते थे कि हम हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की औलाद (सन्तान) हैं। हरम के पासबान (देख-भाल करने वाले), अल्लाह के घर के वाली (ज़िम्मेदार) और मक्का के निवासी हैं कोई आदमी हमारे दर्जे का नहीं और न किसी के हक़ हमारे हक़ों जितने हैं---और इसी आधार पर ये अपना नाम हुम्स (बहादुर और गर्मजोश) रखते थे--- इसलिए हमारी शान के ख़िलाफ़ है कि हम हरम की सीमाओं से बाहर जाएं। चुनांचे हज के ज़माने में ये लोग अरफ़ात नहीं जाते थे और न वहां से इफ़ाज़ा करते थे, बल्कि मुज़दलफ़ा ही में ठहर कर वहीं से इफ़ाज़ा कर लेते थे अल्लाह ने इस बिदअ़त (नयी बात) का सुधार करते हुए फ़रमाया---------
ثُمَّ أَفِيضُوا مِنْ حَيْثُ أَفَاضَ النَّاسُ "तुम लोग भी वहीं से इफ़ाज़ा करो जहां से सारे लोग इफ़ाज़ा करते है।"[12]

उनकी एक बिदअ़त यह भी थी कि वे कहते थे कि हुम्स (क़ुरैश) के लिए एहराम की हालत में पनीर और घी बनाना ठीक नहीं और न यह ठीक है कि बाल वाले घर (यानी कम्बल के ख़ेमे) में दाख़िल हों और न यह ठीक है कि साया हासिल करना हो तो चमड़े के ख़ेमे के सिवा कहीं और साया हासिल करें।[13]

उनकी एक बिदअ़त यह भी थी वे कहते थे कि हरम के बाहर के निवासी हज या उमरा करने के लिए आएं और हरम के बाहर से खाने की कोई चीज़ लेकर आएं तो उसे उनके लिए खाना सही नहीं।[14]

12) इब्ने हिशाम 1/99,बुख़ारी 1/226
13) इब्ने हिशाम 1/202
14) इब्ने हिशाम 1/202

उनकी एक बिदअ़त यह भी थी कि उन्होंने हरम के बाहर के निवासियों को हुक्म दे रखा था कि वे हरम में आने के बाद पहला तवाफ़ हुम्स से हासिल किए हुए कपड़ो ही में करें। चुनांचे अगर उनका कपड़ा न मिलता तो मर्द नंगे तवाफ़ करते और औरतें अपने सारे कपड़े उतार कर सिर्फ़ एक छोटा सा खुला हुआ कुरता पहन लेतीं और उसी में तवाफ़ करतीं और तवाफ़ के समय यह पद्य पढ़ती जातीं:

اَلْيَوْمَ يَبْدُوْ بَعْضُهٗ اَوْ كُلُّهٗ وَمَا بَدَا مِنْهُ فَلَا اُحِلُّهٗ

'आज कुछ या कुल (शर्मगाह) खुल जाएगी, लेकिन जो खुल जाए मैं उसे (दिखना) हलाल नहीं क़रार देती।'

अल्लाह ने इस ख़ुराफ़ात के ख़ातमे के लिए फ़रमाया:

يٰبَنِيْٓ اٰدَمَ خُذُوْا زِيْنَتَكُمْ عِنْدَ كُلِّ مَسْجِدٍ

"ऐ आदम के बेटों! हर मस्जिद के पास अपनी ज़ीनत अख़्तियार कर लिया करो" (7:31)

बहरहाल अगर कोई औरत या मर्द बड़ा और प्रतिष्ठित बन कर हरम के बाहर से लाए हुए अपने ही कपड़ों में तवाफ़ कर लेता तो तवाफ़ के बाद इन कपड़ों को फेंक देता, उनसे न ख़ुद फ़ायदा उठाता, न कोई और।[15]

क़ुरैश की एक बिदअ़त यह भी थी कि वह हालते एहराम में घर के अंदर दरवाज़े से दाख़िल न होते थे, बल्कि घर के पिछवाड़े एक बड़ा सा सूराख़ बना लेते और उसी से आते-जाते थे और अपने इस उजडपन को नेकी समझते थे। क़ुरआन करीम ने इससे भी मना फ़रमाया।(2:189)

यही दीन----यानी शिर्क और बुत-परस्ती और वहम का गुमान और ख़ुराफ़ात पर आधारित अक़ीदा व अ़मल वाला दीन-----आ़म अ़रब वालों का दीन था।

15) इब्ने हिशाम 1/202 1/202-203, बुख़ारी 1/226

इसके अलावा अरब प्रायद्वीप के चारों ओर यहूदी धर्म, मसीही धर्म, मजूसी धर्म और सबाई धर्म ने भी घुसपैठ करने के मौक़े पा लिए थे, इसलिए उनकी संक्षिप्त रूप-रेखा प्रस्तुत की जा रही है।

अरब प्रायद्वीप में यहूदियों के कम से कम दो युग हैं----

पहला युग उस समय से ताल्लुक़ रखता है जब फ़लस्तीन में बाबुल और आशूर के राज्य की जीतों की वजह से यहूदियों को देश छोड़ना पड़ा। इस राजा की कठोरता और बुख़्ते-नस्र के हाथों यहूदी बस्तियों की तबाही और वीरानी, उनके हैकल की बर्बादी और उनकी बड़ी सख़्या के बाबुल देश से निकाले जाने का नतीजा यह हुआ कि यहूदियों की एक जमाअ़त फ़लस्तीन छोड़ कर हिजाज़ के उत्तरी भाग में आ बसी।[16]

दूसरा युग उस समय शुरू होता है जब टाइटस रूमी के नेतृत्व में सन् 70 ई० में रूमियों ने फ़लस्तीन पर क़ब्ज़ा किया। इस मौक़े पर रुमियों के हाथों यहूदियों की पकड़-धकड़ और यसरिब, ख़ैबर और तैमा में आबाद होकर यहां अपनी बाक़ायदा बस्तियां बसा लीं और क़िले व गढ़ियां बना लीं। वतन छोड़ने वाले इन यहूदियों के ज़रिए अ़रब निवासियों में किसी क़दर यहूदी धर्म का भी रिवाज हुआ और उसे भी इस्लाम आने से पहले और उसके आरंभिक युग की राजनीतिक घटनाओं में एक उल्लेखनीय हैसियत हासिल हो गई। इस्लाम आने के समय मशहूर राजनीतिक क़बीले ये थे---- ख़ैबर, नसीर, मुस्तलिक़, कुरैज़ा और क़ैनुक़ाअ़। समहूदी ने "वफ़ाउल् वफ़ा" के पृ० 116 में बताया है कि यहूदी क़बीलों की तायदाद बीस से ज़्यादा थी।[17]

यहूदी धर्म यमन में भी पला बढ़ा, यहां उसके फैलने की वजह तबान असअ़द अबू कर्ब था। यह आदमी लड़ाई लड़ता हुआ यस्रिब

16) क़ल्बु जज़ीरतिल-अरब 25)

17) इब्ने हिशाम 1/202

पहुंचा, वहां यहूदी धर्म अपना लिया और बनू क़ुरैज़ा के दो यहूदी उलेमा को अपने साथ यमन ले आया और उनके ज़रिए यहूदी धर्म को यमन में वुसअ़त और फैलाव हुआ। अबू कर्ब के बाद उसका बेटा युसूफ़ जू-नवास यमन का हाकिम हुआ तो उसने यहूदी धर्म के जोश में नजरान के ईसाइयों पर हल्ला बोल दिया और उन्हें मजबूर किया कि यहूदी धर्म कुबूल करें, पर उन्होंने इंकार कर दिया। इस पर जू-नवास ने खाई खुदवाई और उसमें आग जला कर बूढ़े-बच्चे, मर्द-औरत सब को बिना ख्याल किये आग के अलाव में झोंक दिया। कहा जाता है कि इस दुर्घटना का शिकार होने वालों की तायदाद बीस से चालीस हज़ार के बीच थी। यह अक्टूबर 523 ई० की घटना है। कुरआन मजीद ने सूरः बुरूज में इसी घटना का उल्लेख किया है।[18]

जहां तक ईसाई धर्म का ताल्लुक़ है तो अ़रब इलाक़े में इसका आगमन हब्शी और रूमी क़ब्ज़ा करने वालों और विजेताओं के ज़रिए हुई। हम बता चुके हैं कि यमन पर हब्शियों का क़ब्ज़ा पहली बार 340 ई० में हुआ और 370 ई० तक बाक़ी रहा। इस बीच यमन में ईसाई मिशन काम करता रहा, लगभग उसी ज़माने में एक करामतों वाला ज़ाहिद, जिसकी दुआएं मान ली जाती थीं और जिसका नाम फ़ीमयून था, नजरान पहुंचा और वहां के निवासियों में ईसाई धर्म का प्रचार किया। नजरान वालों ने उसकी और उसके दीन की सच्चाई की कुछ ऐसी निशानियां देखीं कि उन्होंने ईसाई धर्म अपना लिया।[19]

फिर जू-नवास की कार्यवाही की प्रतिक्रिया के तौर पर हब्शियों ने दोबारा यमन पर कब्ज़ा कर लिया और अबरहा ने यमन राज्य की बाग-डोर अपने हाथ में ली, तो उसने बड़े उत्साह और उमंग के साथ बड़े पैमाने पर ईसाई धर्म को बढ़ाने की कोशिश की। इस उत्साह ही का

18) इब्ने हिशाम 1/20-22,27,31,35,36, तफ़सीरे सूरः बुरूज

19) इब्ने हिशाम 1/31-34

नतीजा था कि उसने यमन में एक काबा तामीर किया और कोशिश की कि अ़रब निवासियों को (मक्का और बैतुल्लाह से) रोक कर उसी का हज कराए और मक्का के बैतुल्लाह शरीफ़ को ढा दे, लेकिन उसके इस साहस पर अल्लाह ने उसे ऐसी सज़ा दी कि अगले-पिछले तमाम लोगों के लिए एक सबक़ बन गया।

दूसरी ओर रूमी क्षेत्रों के पड़ोस में होने की वजह से आले ग़स्सान, बनू तग़लब और बनू तई आदि अ़रब क़बीलों में ईसाई धर्म फैल गया था, बल्कि हीरा के कुछ अ़रब बादशाहों ने भी ईसाई धर्म अपना लिया था।

जहां तक मजूसी धर्म का ताल्लुक़ है, तो इसे अधिकतर फ़ारस के पड़ोसी अ़रबों में बढ़ौतरी मिली थी, जैसे इराक़े अ़रब, बहरैन (अल-अहसा), हजर और अ़रब खाड़ी के तटवर्ती क्षेत्र, इनके अ़लावा यमन पर फ़ारसी क़ब्ज़े के दौरान वहां भी इक्का-दुक्का लोगों ने मजूसी धर्म अपना लिया।

बाक़ी रहा साबी मज़हब तो इराक़ वग़ैरह के पुराने खण्डहरों की खुदाई के दौरान जो शिला-लेख मिले हैं, उनसे पता चलता है कि यह हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम की कुलदानी क़ौम का धर्म था। पुराने ज़माने में शाम और यमन के बहुत से निवासी भी इस धर्म के मानने वाले थे, लेकिन जब यहूदी और फिर ईसाई धर्म आया तो इस धर्म की बुनियादें हिल गईं और इसका रौशन चिराग़ बुझ कर रह गया, फिर भी मजूस के साथ मिल जुल कर उनके पड़ोस में इराक़े अरब और अ़रब खाड़ी के तट पर उस धर्म के कुछ न कुछ पैरवी करने वाले बाक़ी रहे।[20]

धार्मिक स्थिति

जिस वक़्त इस्लाम का चमकता सूरज उदित हुआ है, यही धर्म थे जो अ़रब में पाये जाते थे, लेकिन ये सारे धर्म टूट-फूट का शिकार थे। मुश्रिक लोग, जिनका दावा था कि हम इब्राहीमी धर्म पर हैं, इब्राहीमी

20) तारीख़े अरजुल-क़ुरआन 2/193-208

शरीअ़त के करने और न करने वाले हुक्मों से कोसों दूर थे। इस शरीअ़त ने जिन नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी थी, उनसे इन मुश्रिकों का कोई ताल्लुक़ न था। उनमें गुनाहों की भरमार थी और लम्बा समय होने के कारण उनमें मूर्ति-पूजकों की वही आ़दतें और रस्में पैदा हो चली थीं जिन्हें दीनी (धार्मिक) बकवासों का दर्जा मिला हुआ है। इन आ़दतों और रस्मों ने उनके सामूहिक, राजनीतिक और धार्मिक जीवन पर बड़े गहरे प्रभाव डाले थे।

यहूदी धर्म का हाल यह था कि वह केवल दिखावा और हुकूमत चलाने का ज़रिया बन गया था। यहूदी पेशवा अल्लाह के बजाए स्वयं रब बन बैठे थे, लोगों पर अपनी मर्ज़ी चलाते थे और उनके दिलों में आने वाले विचारों और होंठों की हरकतों तक का हिसाब किताब करते थे। उनकी पूरी तवज्जोह इस बात पर जमी हुई थी कि किसी तरह माल और राज्य मिले, भले ही दीन बर्बाद हो और कुफ़्र और ख़ुदा को न मानने को बढ़ावा मिले और इन शिक्षाओं के साथ लापरवाही ही क्यों न बरती जाए जिनको पवित्र मान्ने का अल्लाह ने हर आदमी को हुक्म दिया है और जिनको अ़मली जामा पहनाने पर उभारा है।

ईसाई धर्म एक न समझ में आने वाली मूर्ति-पूजा बन गया था। उसने अल्लाह और इंसान को अजीब तरह से मिला-जुला दिया था, फिर जिन अरबों ने इस दीन को अपनाया था, उन पर इस दीन (धर्म) का कोई वास्तविक असर न था, क्योंकि उसकी शिक्षाएं उनके जाने-पहचाने तरीक़े से मेल नहीं खाती थीं और वे अपने जीने के तरीक़े को छोड़ नहीं सकते थे।

अरब के बाक़ी धर्मों के मानने वालों का हाल मुश्रिकों जैसा ही था, क्योंकि उनके दिल एक जैसे थे, विश्वास एक से थे और रस्म व रिवाज में एकरूपता थी।

जाहिली (अज्ञानतापूर्ण) समाज की कुछ झलकियां

अरब प्रायद्वीप की राजनीतिक और धार्मिक परिस्थितियों का बयान कर लेने के बाद अब वहां की सामूहिक, आर्थिक और नैतिक परिस्थितियों की रूप-रेखा संक्षिप्त में लिखी जा रही है।

सामूहिक परिस्थिति

अरब आबादी अनेक वर्गों पर आधारित थी और हर वर्ग की परिस्थितियां एक दूसरे से बहुत ज़्यादा अलग-अलग थीं। चुनांचे शालीन वर्ग में मर्द और औरत का ताल्लुक़ अच्छी तरक़्क़ी पर था। औरत को बहुत आज़ादी हासिल थी। उसकी बात मानी जाती थी और उसका इतना सम्मान और रक्षा की जाती थी कि इस राह में तलवारें निकल पड़ती थीं और ख़ून ख़राबे हो जाते थे। आदमी जब अपने दया भाव और वीरता पर, जिसे अरब में ऊंचा स्थान प्राप्त था, अपनी प्रशंसा करना चाहता, तो आम तौर से औरत ही को सम्बोधित करता। कभी-कभी औरत चाहती तो क़बीलों को समझौते के लिए इकट्ठा कर देती और चाहती तो उनके बीच लड़ाई और ख़ून-ख़राबे के शोले भड़का देती, लेकिन इन सबके बावजूद निर्विवाद रूप से मर्द ही को परिवार का 'बड़ा' माना जाता था और उसकी बात निर्णायक हुआ करती थी। इस वर्ग में मर्द और औरत का ताल्लुक़ निकाह के बंधन के रूप में होता था

और यह निकाह औरत के वलियों (अभिभावकों) की निगरानी में अंजाम दिया जाता था। औरत को यह हक़ न था कि अपने वलियों के बिना अपने तौर पर अपना निकाह कर ले।

एक ओर शालीन वर्ग का यह हाल था तो दूसरी ओर दूसरे वर्गों में मर्द और औरतों के मेल मिलाप की और भी कई शक्लें थीं, जिन्हें बदकारी, निर्लज्जता, नग्नता और दुराचार के सिवा कोई और नाम नहीं दिया जा सकता। हज़रत आइशा रज़ि० का बयान है कि अज्ञानता काल में निकाह की चार शक्लें थीं। एक तो वही शक्ल थी जो आज भी लोगों में पायी जाती है कि एक आदमी दूसरे आदमी को उसकी सरपरस्ती में पाई जाने वाली लड़की के लिए निकाह का पैग़ाम देता है, फिर मंज़ूरी के बाद यह महर देकर उससे निकाह कर लेता।

दूसरी शक्ल यह थी कि औरत जब माहवारी से पाक होती तो उसका पति कहता कि फ़लाँ व्यक्ति के पास संदेश भेज कर उससे उसकी शर्मगाह हासिल करो (यानी ज़िना कराओ) और शौहर खुद उससे अलग-थलग रहता और उसके क़रीब न जाता, यहां तक कि स्पष्ट हो जाता कि जिस आदमी से शर्मगाह हासिल की थी (यानी ज़िना कराया था), उससे गर्भ ठहर गया है। जब गर्भ स्पष्ट हो जाता तो उसके बाद अगर पति चाहता तो उस औरत के पास जाता। ऐसा इसलिए किया जाता था कि लड़का सज्जन और गुणवान पैदा हो। इस निकाह को 'निकाहे इस्तब्ज़ाअ़' कहा जाता था। (और इसी को हिन्दुस्तान में नियोग कहते हैं)

निकाह की तीसरी शक्ल यह थी कि दस से कम आदमियों की एक जमाअ़त इकट्ठा होती। सब के सब एक ही औरत के पास जाते और बदकारी करते। जब वह औरत गर्भवती हो जाती और बच्चा पैदा होता तो पैदा होने के चन्द रात बाद वह औरत सबको बुलवाती और सबको आना पड़ता। मजाल न थी कि कोई न आए। इसके बाद वह औरत

कहती कि आप लोगों का जो मामला था, वह तो आप लोग जानते ही हैं और अब मेरे पेट से बच्चा पैदा हुआ है और ऐ फ़्लां! वह तुम्हारा बेटा है। वह औरत उनमें से जिसका नाम चाहती ले लेती, और वह उसका बेटा मान लिया जाता।

चौथा निकाह यह था कि बहुत से लोग इकट्ठा होते और किसी औरत के पास जाते। वह अपने पास किसी आने वाले को इंकार न करती। ये रंडियां होती थीं जो अपने दरवाज़ों पर झंडियां गाड़े रखती थीं, ताकि यह निशानी का काम दे और जो उनके पास जाना चाहे, बे धड़क चला जाए। जब ऐसी औरत गर्भवती होती और बच्चा पैदा होता, तो सबके सब उसके पास जमा होते और अनुमान करके बताने वाले को बुलाते। वह अपनी राय के मुताबिक़ उस लड़के को किसी भी व्यक्ति से जोड़ देता, फिर यह उसी से जुड़ जाता और उसी का लड़का कहलाता। वह इससे इंकार न कर सकता था-------जब अल्लाह ने हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पैग़म्बर बना कर भेजा तो जाहिलियत के सारे निकाह ख़त्म कर दिए, सिर्फ़ इस्लामी निकाह बाक़ी रहा जो आज रिवाज में है।[1]

अरब में मर्द और औरत के मिलने-जुलने की कुछ शक्लें ऐसी भी थीं जो तलवार की धार और नेज़े की नोक पर वजूद में आती थीं यानी क़बीलों की आपसी लड़ाइयों में जीतने वाला क़बीला हारने वाले क़बीले की औरतों को क़ैद करके अपने हरम में दाख़िल कर लेता था, लेकिन ऐसी औरतों से पैदा होने वाली औलाद ज़िंदगी भर शर्म महसूस करती थी।

अज्ञानता युग में किसी सीमा के बिना अनेकों पत्नियां रखना भी एक जानी-पहचानी बात थी, लोग ऐसी दो औरतें भी एक ही वक़्त में

---

1) बुख़ारी किताबुन-निकाह 2/769, अबू दाऊद-बाब वुजूहुन-निकाह

निकाह में रख लेते थे जो आपस में सगी बहन होती थीं। बाप के तलाक़ देने या वफ़ात पाने के बाद बेटा अपनी सौतेली मां से भी निकाह कर लेता था, तलाक़ का अधिकार मर्द को हासिल था और उसकी कोई सीमा निश्चित न थी।[2]

ज़िनाकारी (व्याभिचार) तमाम वर्गों में चरम सीमा पर थी। कोई वर्ग या इंसानों की कोई क़िस्म इससे अलग न थी, हां, कुछ मर्द और कुछ औरतें ऐसी ज़रूर थीं, जिन्हें अपनी बड़ाई का एहसास इस बुराई के कीचड़ में लथपथ होने से रोके रखता था। फिर आज़ाद औरतों का हाल लौंडियों के मुक़ाबले में ज़्यादा अच्छा था। असल मुसीबत लौंडियां ही थीं। ऐसा लगता है कि जाहिलियत वालों की भारी तायदाद इस बुराई से जुड़ने में कोई शर्म भी महसूस नहीं करती थी। चुनांचे सुनने अबू दाऊद वग़ैरह में रिवायत है कि एक बार एक आदमी ने खड़े होकर कहा, ऐ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! फ़लां आदमी मेरा बेटा है। मैंने अज्ञानता युग में इसकी मां से ज़िना किया था। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, 'इस्लाम में ऐसे दावे की कोई गुंजाइश नहीं। अज्ञानता की बात गई। अब तो लड़का उसी का होगा, जिसकी बीवी या लौंडी हो और ज़ानी (व्याभिचारी) के लिए पत्थर है।' और हज़रत साद बिन अबी वक़्क़ास रज़ि० और अब्द बिन ज़मआ के बीच ज़मआ की लौंडी के बेटे——अब्दुर्रहमान बिन ज़मआ——के बारे में जो झगड़ा पेश आया था, वह भी मालूम और मशहूर है।[3]

अज्ञानता काल में बाप-बेटे का ताल्लुक़ भी विभिन्न प्रकार का था, कुछ तो ऐसे थे जो कहते थे——

إِنَّمَا أَوْلَادُنَا بَيْنَنَا أَكْبَادُنَا تَمْشِي عَلَى الْأَرْضِ

2) अबू दाऊद नुसख़ुन मुत्तअ़ति बाइत-तलीक़ासि-सनासा

3) बुख़ारी 2/999, 1065 तथा अबू दाऊद : अल-वलदु लिल-फ़राशि

'हमारी औलाद हमारे कलेजे हैं जो धरती पर चलते-फिरते हैं।'

लेकिन दूसरी ओर कुछ ऐसे भी थे, जो लड़कियों को रुस्वाई और ख़र्च के डर से ज़िंदा दफ़न कर देते थे और बच्चों को भूख और उपवास के डर से मार डालते थे।[4] लेकिन यह कहना कठिन है कि यह पत्थरदिली (कठोरपन) बड़े पैमाने पर चल रही थी, क्योंकि अरब अपने दुश्मन से अपनी हिफ़ाज़त के लिए दूसरों के मुक़ाबले में कहीं ज़्यादा औलाद के मुहताज थे और इसका एहसास भी रखते थे।

जहां तक सगे भाईयों, चचेरे भाईयों और कुंबे-क़बीले के लोगों के आपसी ताल्लुक़ात का मामला है तो ये अच्छे भले पक्के और मज़बूत थे, क्योंकि अरब के लोग क़बीला गत पक्षपात ही के सहारे जीते और उसी के लिए मरते थे। क़बीले के अंदर आपसी सहयोग और सामूहिकता की आत्मा पूरी तरह काम कर रही होती थी, जिसे पक्षपात का जोश और अधिक भड़काता था। जबकि सच यह है कि जातीय पक्षपात और रिश्तेदारी का ताल्लुक़ ही उनकी सामूहिक व्यवस्था की बुनियाद थे। वे लोग इस कहावत पर शाब्दिक अर्थ के अनुसार ही अमल कर रहे थे कि 'उन्सुर अख़ा-क ज़ालिमन अव मज़्लूमन' (अपने भाई की मदद करो चाहे ज़ालिम हो या मज़्लूम) इस कहावत के मललब में अभी वह सुधार नहीं हुआ था जो बाद में इस्लाम के ज़रिए किया गया। यानी ज़ालिम की मदद यह है कि उसे ज़ुल्म न करने दिया जाए, अलबत्ता सरदारी में एक दूसरे से आगे निकल जाने की भावना बहुत बार एक ही व्यक्ति से वजूद में आने वाले क़बीलों के बीच लड़ाई की वजह बन जाया करता था, जैसा कि औस व ख़ज़रज, अब्स व ज़ुबियान और बक्र व तग़लब आदि की घटनाओं में देखा जा सकता है।

---

4) क़ुरआन 6:101, 16:58,59, 17:31, 18:8

जहां तक अलग-अलग क़बीलों के एक दूसरे से ताल्लुक़ात का मामला है तो यह पूरी तरह बिखरता हुआ है। क़बीलों की सारी ताक़त एक दूसरे के ख़िलाफ़ लड़ाई में फ़ना हो रही थी, अलबत्ता दीन और ख़ुराफ़ात (बेकार की बातों) की मिलावट से तैयार की गई कुछ रस्मों और आदतों की वजह से कभी-कभी लड़ाई की तेज़ी में कमी आ जाती थी और कुछ स्थिति में दोस्ती, समझौते और ताबेदारी के नियमों पर अलग-अलग क़बीले इकट्ठा हो जाते थे। इसके अलावा हराम महीने उनकी ज़िंदगी और रोज़ी हासिल करने के लिए पूरी तरह रहमत और मदद थे।

सार यह कि सामूहिक स्थिति कमज़ोरी और अनदेखेपन की पस्ती में गिरी हुई थी। अज्ञान अपना ज़ोर लगाए हुए था और बेकार की बातों का आम चलन था। लोग जानवरों जैसी ज़िंदगी बिता रहे थे, औरत ख़रीदी और बेची जाती थी और कभी कभी उससे मिट्टी और पत्थर जैसा व्यवहार किया जाता था। क़ौम के आपसी ताल्लुक़ात कमज़ोर, बल्कि टूटे हुए थे और राज्यों की सारी योजनाएं अपनी जनता से ख़ज़ाने भरने या विरोधियों पर सैनिक आक्रमण करने तक सीमित थीं।

आर्थिक स्थिति

आर्थिक स्थिति सामाजिक स्थिति के अधीन थी। इसका अंदाज़ा अरब के आर्थिक साधनों पर नज़र डालने से हो सकता है कि व्यापार ही उनके नज़दीक जीवन-आवश्यकता प्राप्त करने का सब से महत्वपूर्ण साधन था और मालूम है कि व्यापारिक आना-जाना सुख-शान्ति के वातावरण के बग़ैर आसान नहीं और अ़रब प्रायद्वीप का हाल यह था कि सिवाए हराम महीनों के सुख-शान्ति का कहीं अस्तित्व न था। यही वजह है कि सिर्फ़ हराम महीनों ही में अ़रब के मशहूर बाज़ार उकाज़, ज़िल्-मजाज़ और मजिन्ना आदि लगते थे।

जहां तक उद्योगों का मामला है तो अ़रब इस मैदान में सारी दुनिया से पीछे थे। कपड़े की बुनाई और चमड़े की सफ़ाई आदि की

शक्ल में जो कुछ उद्योग पाये भी जाते थे, वे ज़्यादातर यमन, हियरा और सीरिया से मिले हुऐ क्षेत्रों में थे, अलबत्ता अरब के भीतरी भाग में खेती-बाड़ी और जानवर पालने का किसी क़दर रिवाज था। सारी अरब औरतें सूत कातती थीं लेकिन परेशानी यह थी कि सारी धन-दौलत हमेशा लड़ाइयों के निशाने पर रहती थी, भूख और उपवास आम था और लोग ज़रूरी कपड़ों से भी बड़ी हद तक महरूम रहते थे।

चरित्र-आचरण

यह तो अपनी जगह तय है ही कि अज्ञानता युग में गिरी हुई घटिया आदतें, सोच विचार और सद्बुद्धि के विरोध की बातें पाई जाती थीं, लेकिन इनमें ऐसे पसन्दीदा चरित्रवान भी थे जिन्हें देख कर लोग दंग रह जाते और हैरत में पड़ जाते थे जैसे--------

1. दया और दानशीलता

यह अज्ञानता युग वालों का ऐसा गुण था जिसमें वे एक दूसरे से आगे निकल जाने की कोशिश करते थे और इस पर इस तरह गर्व करते थे कि अरब का आधा काव्य उसी की भेंट चढ़ गया है इस गुण के आधार पर किसी ने ख़ुद अपनी प्रशंसा की है तो किसी ने किसी और की। हालत यह थी कि कड़े जाड़े और भूख के ज़माने में किसी के घर में कोई मेहमान आ जाता और उसके पास अपनी इस एक ऊंटनी के सिवा कुछ न होता, जो उसकी और उसके कुंबे की ज़िंदगी का एक ही साधन होता, तो भी----ऐसी संगीन हालत के बावजूद----उस पर दानशीलता का जोश छा जाता और वह उठकर अपने मेहमान के लिए अपनी ऊंटनी ज़िब्ह कर देता। उनकी कृपा ही का फल था कि वे बड़ी-बड़ी देनदारी और माली ज़िम्मेदारियां उठा लेते और इस तरह इंसानों को बर्बादी और ख़ून-ख़राबे से बचा कर दूसरे सरदारों और रईसों के मुक़ाबले में गर्व करते थे।

इसी कृपा का फल था कि वे शराब पीने पर गर्व करते थे, इसलिए नहीं कि यह अपने आप में कोई गर्व की बात थी, बल्कि इसलिए कि यह कृपा और दानशीलता को आसान कर देती थी, क्योंकि नशे की हालत में माल लुटाना मानव स्वभाव पर बोझ नहीं होता, इसलिए ये लोग अंगूर के पेड़ को किर्म और अंगूर की शराब को 'बिन्तुल किर्म' कहते थे। अज्ञानता युग के काव्य-दीवानों पर नज़र डालिए तो यह प्रशंसा और गर्व का एक महत्वपूर्ण अध्याय दिखाई पड़ेगा। अन्तरा बिन शद्दाद अबसी अपने मुअल्लक़ा (काव्य) में कहता है------

ولقد شربت من المدامة بعد ما ركد الهو اجربالمشوف المعلم

بزجاجة صفراء ذات اَسِرَّة قرنت بأزهر بالشمال مفدم

فاذا شربت فانني مستهلک مالي، وعرضي وافر لم يكلم

واذاصحوت فما اقصرعن ندى وكما علمت شمائلي وتكرمي

'मैंने दोपहर की तेज़ी रुकने के बाद एक पीले रंग के धारीदार जामे बिल्लोरीं से जो बायीं ओर रखी हुई चमकदार और मुंहबंद जाम के साथ था, निशान लगी हुई साफ़-शफ़्फ़ाफ़ शराब पी और जब मैं पी लेता हूं, तो अपना माल लुटा डालता हूं लेकिन मेरी आबरू भरपूर रहती है, उस पर कोई चोट नहीं आती और जब मैं होश में आता हूं तब भी सख़ावत (दानशीलता) में कोताही नहीं करता और मेरा चरित्र और मेहरबानी जैसा कुछ है, तुम्हें मालूम है।'

उनकी कृपा ही का नतीजा था कि वे जुआ खेलते थे। उनका विचार था कि यह भी सख़ावत (दानशीलता) की एक शक्ल है, क्योंकि उन्हें जो लाभ होता या लाभ प्राप्त करने वालों के हिस्से से जो कुछ बच जाता, उसे दीन-दुखियारों को दे देते थे। इसीलिए कुरआन ने शराब और जुए के लाभ का इंकार नहीं किया, बल्कि यह फ़रमाया وَإِثْمُهُمَا أَكْبَرُ مِنْ نَّفْعِهِمَا "इन दोनों का गुनाह इनके लाभ से बढ़ कर है।" 2:219

2. वायदे का पूरा करना

यह भी अज्ञानता युग के श्रेष्ठ गुणों में से है। वायदे को उनके नज़दीक दीन की हैसियत हासिल थी, जिससे वे हर हाल में चिमटे रहते थे और इस राह में अपनी औलाद का ख़ून और अपने घर-बार की तबाही भी तुच्छ समझते थे। इसे समझने के लिए हानी बिन मसऊद शैबानी, समुअल बिन आदिया और हाजिब बिन ज़रारा की घटनाएं काफ़ी हैं।

3. स्वाभिमान

इस पर क़ायम रहना और ज़ुल्म और सब्र सहन न करना भी अज्ञानता युग का जाना-पहचाना आचरण था। इसका नतीजा यह था कि इनकी वीरता और स्वाभिमान हद से बढ़ा हुआ था। वे तुरन्त भड़क उठते थे और छोटी से छोटी बात पर, जिससे अनादर व अपमान की गंध आती, तलवारें निकाल लेते और बड़ी ख़ूनी लड़ाई छेड़ देते। उन्हें इस रास्ते में अपनी जान की बिल्कुल परवाह न रहती।

4. निश्चयों की पूर्ति

अज्ञानियों की एक विशेषता यह भी थी कि जब वे किसी काम को बड़कपन का साधन समझ कर अंजाम देने पर तुल जाते, तो फिर कोई रुकावट उन्हें रोक नहीं सकती थी। वे अपनी जान पर खेल कर इस काम को पूरा कर डालते थे।

5. उदारता, सहन-शीलता और गंभीरता

यह भी अज्ञानियों के नज़दीक एक प्रशंसनीय गुण था, पर यह उनकी सीमा से बढ़ी हुई वीरता और लड़ाई के लिए हर वक़्त तैयार रहने की आदत की वजह से कम मिलता था।

6. बदवी सादगी

अर्थात संस्कृति की गन्दगियों और दांव पेंच का न जानना और

दूरी। इसका नतीजा यह था कि इन में सच्चाई और अमानत पाई जाती थी। वे धोखा-धड़ी और वायदा-ख़िलाफ़ी से दूर और घृणा रखने वाले थे।

हम समझते हैं कि अरब प्रायद्वीप का सारी दुनिया से जो भौगोलिक संबंध था, उसके अलावा यही वे मूल्यवान चरित्र थे, जिनकी वजह से अरबों को मानव-जाति के नेतृत्व और अपना पैग़ाम पहुंचाने का बोझ उठाने के लिए चुना गया, क्योंकि ये चरित्र यद्यपि कभी-कभी बिगाड़ की वजह बन जाते थे और इनकी वजह से दुखद-घटनाएं भी हो जाती थीं, लेकिन ये अपने आप में बड़े मूल्यवान चरित्र थे जो थोड़े से सुधार के बाद मानव समाज के लिए बड़े उपयोगी बन सकते थे और यही काम इस्लाम ने अंजाम दिया।

शायद इन चरित्रों में भी वायदों को पूरा करने के बाद मान सम्मान और निश्चय में दृढ़ता सब से क़ीमती और लाभप्रद गुण था, क्योंकि इस शक्ति और दृढ़-निश्चय के बिना दुष्टता और बिगाड़ का अन्त और न्याय व्यवस्था की स्थापना संभव नहीं।

अज्ञानियों के कुछ और भी गुण थे, लेकिन यहां सब पर रोशनी डालना अभिप्रेत नहीं।

नुबूवत का वंश, पैदाइश
और
पाक ज़िंदगी के चालीस साल

नुबूवत का वंश

वंश

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वंश का सिलसिला तीन भागों में बांटा जा सकता है -

० एक भाग, जिसके सहीह होने पर सारे वंश-विशेषज्ञ सहमत हैं, यह अ़दनान पर ख़तम होता है।

० दूसरा भाग, जिसमें वंश-विशेषज्ञों के मत अलग अलग हैं, कोई मानता है, कोई नहीं मानता, यह अ़दनान से ऊपर इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम तक चलता है।

० तीसरा भाग, जिसमें यक़ीनी तौर पर कुछ ग़लतियां हैं, यह हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से ऊपर हज़रत आदम अलैहिस्सलाम तक जाता है इस ओर इशारा गुज़र चुका है। आगे तीनों भागों का कुछ विस्तार में विवरण दिया जा रहा है।

पहला भागः

मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन अब्दुल-मुत्तलिब (शैबा) बिन हाशिम (अम्र) बिन अब्दे मुनाफ़ (मुग़ीरह) बिन क़ुसई (ज़ैद) बिन किलाब बिन मुर्रा बिन काब बिन लुई बिन ग़ालिब बिन फ़हर (इन्हीं की उपाधि क़ुरैश थी और इन्हीं के नाम से क़ुरैश क़बीला जुड़ा हुआ है) बिन मालिक बिन नज़्र (क़ैस) बिन कनाना बिन खुज़ैमा बिन मुदरिक (आमिर) बिन

इलयास बिन मुज़र बिन नज़ार बिन मअ़द बिन अदनान।[1]

दूसरा भागः

अदनान के ऊपर यानी अदनान बिन उद बिन हमीसअ़ बिन सलमान बिन औस बिन बौज़ बिन क़मवाल बिन अबी बिन अव्वाम बिन नाशिद बिन हज़ा बिन बलदास बिन यदलाफ़ बिन ताबिख़ बिन जाहिम बिन नाहिश बिन माख़ी बिन ऐज़ बिन अबक़र बिन उबैद बिन अद-दुआ बिन हमदान बिन संबर बिन यसरबी बिन यहज़न बिन यलहन बिन अरावा बिन ऐज़ बिन ज़ीशान बिन ऐसर बिन अफ़नाद बिन ऐहाम बिन मक़्सर बिन नाहिस बिन ज़ारिह बिन समी बिन मज़ी बिन औजा बिन अराम बिन क़ैदार बिन इस्माईल अलैहिस्सलाम बिन इब्राहीम अलैहिस्सलाम।[2]

तीसरा भागः

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से ऊपर--इब्राहीम बिन तारेह (आज़र) बिन नाहूर बिन सारूअ़ (या सारूग़) बिन राऊ बिन फ़ालिख़ बिन आबिर बिन शालिख़ बिन अरफ़ख़शद बिन साम बिन नूह अलैहिस्सलाम बिन लामिक बिन मतूशलख़ बिन अख़नूख़ (कहा जाता है कि यह हज़रत इदरीस अलैहिस्सलाम का नाम है) बिन यर्द बिन महलाईल बिन क़ैनान बिन आनूशा बिन शीस बिन आदम अलैहिस्सलाम।[3]

---

1) इब्ने हिशाम 1/201, तल्क़ीहु फ़ुहूमि अहलिल-असर 605, रहमतुल-लिल-आलमीन 2/11-14,52

2) अल्लामा मन्सूरपुरी ने पूर्ण जांच-पड़ताल के पश्चात इस वंशावली को कलबी और सऊद के वर्णन से जमा किया है। देखिए रहमतुल-लिल-आलमीन 2/14-17 इतिहास की किताबों में इस भाग को लेकर बहुत मतभेद है।

3) इब्ने हिशाम 1/2-4, तल्क़ीहुल-फ़ुहूम 6, क़सासतुस-सियर 6, रहमतुल-लिल-आलमीन 2/18 कुछ नामों को लेकर इन किताबों में भी मतभेद है और कुछ नाम कुछ किताबों में नहीं हैं।

परिवार

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का परिवार अपने दादा हाशिम बिन अब्दे मुनाफ़ के ताल्लुक़ से हाशिमी परिवार के नाम से मशहूर है इसलिए उचित लगता है कि हाशिम और उनके बाद के कुछ लोगों के हालात संक्षेप में पेश कर दिए जाएं।

1. हाशिमः

हम बता चुके हैं कि जब बनू अब्दे मुनाफ़ और बनू अब्दुद्दार के बीच पदों के बंटवारे पर समझौता हो गया, तो अब्दे मुनाफ़ की औलाद में हाशिम ही को हाजियों को पानी पिलाने और उनकी महमानी का पद मिला। हाशिम बड़े प्रतिष्ठित और धनी व्यक्ति थे। यह पहले आदमी हैं जिन्होंने मक्के में हाजियों को सालन रोटी सान कर खिलाने की व्यवस्था की। इनका असल नाम अम्र था, लेकिन रोटी तोड़ कर शोरबा में सानने की वजह से इनको हाशिम कहा जाने लगा। क्योंकि हाशिम का मतलब है तोड़ने वाला, फिर यही हाशिम वह पहले आदमी हैं जिन्होंने क़ुरैश के लिए गर्मी और जाड़े के दो वार्षिक व्यापारिक जत्थों के आने-जाने की बुनियाद रखी। इनके बारे में कवि कहता है----

عمرو الذی هشم الثرید لقومه قوم بمكة مُسنتين عجاف
سنت اليه الرحلتان كلاهما سفر الشتاء ورحلة الأصياف

'यह अम्र वही हैं जिन्होंने अकाल की मारी हुई अपनी दुबली क़ौम को मक्का में रोटियां तोड़ कर सालन में भिगो-भिगोकर खिलाई और जाड़े और गर्मी की दोनों यात्राओं की नींव रखी।'

इनकी एक महत्वपूर्ण घटना यह है कि वह व्यापार के लिए शाम (सीरिया) देश तशरीफ़ ले गए। रास्ते में मदीना पहुंचे तो वहां क़बीला बनी नज्जार की एक महिला सलमा बिन्त अम्र से शादी कर ली और कुछ दिनों तक वहीं ठहरे रहे। फिर बीवी को गर्भ की हालत में मायके

में ही छोड़ कर शाम देश चले गए और वहां जाकर फ़लस्तीन के शहर ग़ज़्ज़ा में मृत्यु पा गए। इधर सलमा के पेट से बच्चा पैदा हुआ। यह सन् 497 ई० की बात है। चूंकि बच्चे के सर के बालों में सफ़ेदी थी इसलिए सलमा ने उसका नाम शैबा रखा[4] और यसूरिब में अपने मैके ही के अंदर उसका पालन-पोषण किया। आगे चल कर यही बच्चा 'अब्दुल मुत्तलिब' के नाम से मशहूर हुआ एक समय तक हाशिम परिवार के किसी आदमी को उसके होने का ज्ञान न हो सका। हाशिम के कुल चार बेटे और पांच बेटियां थीं, जिनके नाम ये हैं——

बेटेः असद, अबू सैफ़ी, फ़ुज़ला, अब्दुल मुत्तलिब।

बेटियांः शिफ़ा, ख़ालिदा, ज़ईफ़ा, रुक़ैया और जन्ना।[5]

2. अब्दुल मुत्तलिबः

पिछले पन्नों से मालूम हो चुका है सिक़ाया और रिफ़ादा का पद हाशिम के बाद उनके भाई मुत्तलिब को मिला। यह भी अपनी क़ौम में बड़े गुणों और प्रतिष्ठा के मालिक थे। इनकी बात टाली नहीं जाती थी। इनकी दानशीलता के कारण क़ुरैश ने इनकी उपाधि 'फ़य्याज़' (दानशील) रख छोड़ी थी। जब शैबा यानी अब्दुल मुत्तलिब दस-बारह वर्ष के हो गए तो मुत्तलिब को इनका ज्ञान हुआ और वह इन्हें लेने के लिए रवाना हुए। जब यसूरिब के क़रीब पहुंचे और शैबा पर नज़र पड़ी तो आंखें भर आई, उन्हें सीने से लगा लिया और फिर अपनी सवारी पर पीछे बिठा कर मक्का के लिए रवाना हो गए। मगर शैबा ने मां की इजाज़त के बग़ैर साथ जाने से इंकार कर दिया। इसलिए मुत्तलिब उनकी मां से इजाज़त मांगने लगे, मगर मां ने इजाज़त न दी। आख़िर मुत्तलिब ने कहा कि ये अपने बाप की हुकूमत और अल्लाह के हरम की तरफ़ जा रहे हैं, इस पर मां ने इजाज़त दे दी और मुत्तलिब उन्हें अपने ऊंट पर

4) इब्ने हिशाम 1/137, रहमतुल-लिल-आलमीन 1/26, 2/24

5) इब्ने हिशाम 1/107

बिठा कर मक्का ले आए। मक्के वालों ने देखा तो कहा, यह अब्दुल मुत्तलिब है यानी मुत्तलिब का गुलाम है। मुत्तलिब ने कहा, नहीं-नहीं, यह मेरा भतीजा यानी मेरे भाई हाशिम का लड़का है। फिर शैबा ने मुत्तलिब के पास परवरिश पायी और जवान हुए। इसके बाद रोमान (यमन) में मुत्तलिब की वफ़ात हो गयी और उनके छोड़े हुए पद अब्दुल मुत्तलिब को हासिल हुए। अब्दुल मुत्तलिब ने अपनी क़ौम में इतनी पद-प्रतिष्ठा प्राप्त की कि उनके बाप-दादा में भी कोई इस पद को न पा सका। क़ौम ने उन्हें दिल से चाहा और उनका बड़ा मान-सम्मान किया।[6]

जब मुत्तलिब की वफ़ात हो गई तो नौफ़ल ने अब्दुल मुत्तलिब के आंगन पर ज़बदरस्ती क़ब्ज़ा कर लिया। अब्दुल मुत्तलिब ने क़ुरैश के कुछ लोगों से अपने चचा के ख़िलाफ़ मदद चाही, लेकिन उन्होंने यह कह कर विवशता दिखायी कि हम तुम्हारे और तुम्हारे चचा के बीच दख़ल नहीं दे सकते। आख़िर मुत्तलिब ने बनी नज्जार में अपने मामूं को कुछ पद्य लिख भेजे, जिसमें उनसे मदद की दर्ख़्वास्त की थी। जवाब में उनका मामूं अबू साद बिन अदी अस्सी सवार लेकर रवाना हुआ और मक्के के क़रीब अबतह में उतरा। अब्दुल मुत्तलिब ने वहीं मुलाक़ात की और कहा मामूं जान! घर तशरीफ़ ले चलें। अबू साद ने कहा, नहीं, ख़ुदा की क़सम! यहां तक कि नौफ़ल से मिल लूं। इसके बाद अबू साद आगे बढ़ा और नौफ़ल के सर पर आ खड़ा हुआ। नौफ़ल हतीम में क़ुरैश के बुज़ुर्गों के संग बैठा था। अबू साद ने तलवार नंगी करते हुए कहा, इस घर के रब की क़सम! अगर तुमने मेरे भांजे की ज़मीन वापस न की, तो यह तलवार तुम्हारे अंदर गाड़ दूंगा। नौफ़ल ने कहा, अच्छा! लो, मैं ने वापस कर दी। इस पर अबू साद ने क़ुरैश के बुज़ुर्गों को गवाह बनाया, फिर अब्दुल मुत्तलिब के घर गया और तीन दिन ठहर कर उमरा करने के बाद मदीना वापस चला गया।

---

6) इब्ने हिशाम 1/137 138

इस घटना के बाद नौफ़ल ने बनी हाशिम के ख़िलाफ़ बनी अब्दे शम्स से आपसी सहयोग का समझौता किया। उधर बनू ख़ुज़ाआ ने देखा कि बनू नज्जार ने अब्दुल मुत्तलिब की इस तरह मदद की है तो कहने लगे कि अब्दुल मुत्तलिब जिस तरह तुम्हारी औलाद है, हमारी भी औलाद है, इसलिए हम पर उसकी मदद का हक़ ज़्यादा है इसकी वजह यह थी कि अब्दे मुनाफ़ की मां क़बीला ख़ुज़ाआ ही से ताल्लुक़ रखती थी------चुनांचे बनू ख़ुज़ाआ ने दारून्नदवा में जाकर बनू अब्दे शम्स और बनू नौफ़ल के ख़िलाफ़ बनू हाशिम से सहयोग का वायदा किया। यही वायदा है जो आगे चल कर इस्लामी दौर में मक्का के जीते जाने की वजह बना। विस्तृत विवरण अपनी जगह आ रहा है।[7]

बैतुल्लाह के ताल्लुक़ से अब्दुल मुत्तलिब के साथ दो महत्वपूर्ण घटनाएं घटीं। एक ज़म-ज़म कुएं की खुदाई की घटना और दूसरी फ़ील (हाथी) की घटना।

ज़म-ज़म के कुएं की खुदाई

पहली घटना का सार यह है कि अब्दुल मुत्तलिब ने ख़्वाब (सपना) देखा कि उन्हें ज़म-ज़म का कुंआं खोदने का हुक्म दिया जा रहा है और सपने ही में उन्हें उसकी जगह भी बताई गई। उन्होंने जागने के बाद खुदाई शुरू की और धीरे-धीरे वे चीज़ें निकलीं जो बनू जुरहुम ने मक्का छोड़ते वक़्त ज़म-ज़म के कुएं में दफ़न की थीं यानी तलवारें, ज़िरहें और सोने के दोनों हिरन। अब्दुल मुत्तलिब ने तलवारों से काबे का दरवाज़ा ढाला, सोने के दोनों हिरन भी दरवाज़े ही में फिट किए और हाजियों को ज़म-ज़म पिलाने का इन्तिज़ाम किया।

खुदाई के दौरान यह घटना भी घटी कि जब ज़म-ज़म का कुंआं ज़ाहिर हो गया, तो क़ुरैश ने अब्दुल मुत्तलिब से झगड़ा शुरु कर दिया

7) मुख़्तसर सीरतुर-रसूल 41-42

और मांग की कि हमें भी ख़ुदाई में शरीक कर लो। अब्दुल मुत्तलिब ने कहा, मैं ऐसा नहीं कर सकता। मैं इस काम के लिए ख़ास किया गया हूं, लेकिन क़ुरैश के लोग न माने। यहां तक कि फ़ैसले के लिए बनी सअ़द की एक काहिना औरत के पास जाना तय हुआ और लोग मक्का से रवाना भी हो गए, लेकिन रास्तें में अल्लाह ने उन्हें ऐसी निशानियां दिखाई कि वे समझ गए कि ज़म-ज़म का काम क़ुदरत की ओर से अ़ब्दुल मुत्तलिब के साथ ख़ास है, इसलिए रास्ते ही से पलट आए। यही मौक़ा था जब अ़ब्दुल मुत्तलिब ने नज़र (मन्नत) मानी कि अगर अल्लाह ने उन्हें दस लड़के दिए और वे सब के सब इस उम्र को पहुंचे कि उनका बचाव कर सकें तो वे एक लड़के को काबे के पास क़ुरबान कर देंगे।[8]

फ़ील (हाथी) की घटना

दूसरी घटना का सार यह है कि अबरहा सबाह हब्शी ने (जो, हब्श के नज्जाशी बादशाह की तरफ़ से यमन का गवर्नर जनरल था) जब देखा कि अरब के लोग ख़ाना-ए-क़ाबा का हज करते हैं तो सनआ़ में एक बहुत बड़ा चर्च तैयार किया और चाहा कि अरब का हज उसी की ओर फेर दे, मगर जब उसकी ख़बर बनू कनाना के एक आदमी को हुई तो उसने रात के वक़्त चर्च के भीतर घुस कर उसके क़िबले पर पाख़ाना पोत दिया। अबरहा को पता चला तो बहुत बिगड़ा और साठ हज़ार की एक भारी फ़ौज लेकर काबे को ढाने के लिए निकल खड़ा हुआ। उसने अपने लिए एक ज़बरदस्त हाथी भी चुना। फ़ौज में नौ या तेरह हाथी थे। अबरहा यमन से धावा बोलते हुए मुग़म्मस पहुंचा और वहां अपनी फ़ौज को तर्तीब देकर और हाथी को तैयार करके मक्का में दाख़िले के लिए चल पड़ा। जब मुज़दलिफ़ा और मिना के दर्मियान मुहस्सर घाटी में पहुंचा तो हाथी बैठ गया और काबे की तरफ़ बढ़ने के लिए किसी तरह न उठा उसका रुख़ उत्तर दक्षिण या पूरब की ओर किया जाता तो उठ

8) इब्ने हिशाम 1/142-143

कर दौड़ने लगता, लेकिन काबे की ओर किया जाता तो बैठ जाता। इसी बीच अल्लाह ने चिड़ियों का एक झुंड भेज दिया, जिसने फ़ौज पर ठीकरी जैसे पत्थर गिराए और अल्लाह ने उसी से उन्हें खाए हुए भूसे की तरह बना दिया। ये चिड़ियां कुमरी और अबाबील जैसी थीं। हर चिड़िया के पास तीन-तीन कंकड़ियां थीं एक चोंच में और दो पंजों में, कंकड़ियां चने जैसी थीं, मगर जिस किसी को लग जाती थीं, उसके अंग कटना शुरू हो जाते थे और वह मर जाता था। ये कंकड़ियां हर आदमी को नहीं लगी थीं, लेकिन सेना में ऐसी भगदड़ मची कि हर आदमी दूसरे को रौंदता-कुचलता, गिरता-पड़ता भाग रहा था, फिर भागने वाले हर राह पर गिर रहे थे और हर सोते पर मर रहे थे। उधर अबरहा पर अल्लाह ने ऐसी आफ़त भेजी कि उसकी उंगलियों के पोर झड़ गए और सनआ पहुंचते पहुंचते चूज़े जैसा हो गया, फिर उसका सीना फट गया, दिल बाहर निकल आया और वह मर गया।

अबरहा के इस हमले के मौक़े पर मक्का के निवासी जान के डर से घाटियों में बिखर गए थे और पहाड़ की चोटियों पर जा छिपे थे। जब फ़ौज पर अज़ाब नाज़िल हो गया तो इत्मीनान से अपने घरों को पलट आए।[9]

यह घटना अधिकतर जीवनी-लेखकों के अनुसार—नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जन्म से केवल पचास या पचपन दिन पहले मुहर्रम के महीने में घटित हुई थी, इसलिए यह 571 ई० के फ़रवरी के आख़िर या मार्च के शुरू की घटना है। यह वास्तव में एक आरंभिक निशानी थी, जो अल्लाह ने अपने नबी और अपने काबे के लिए ज़ाहिर फ़रमाई थी क्योंकि आप बैतुल-मक़्दिस को देखिए कि अपने समय में इस्लाम वालों का क़िबला था, और वहां के बाशिन्दे, मुसलमान थे। इस के बावजूद

9) इब्ने हिशाम 1/43-56

उस पर अल्लाह के दुश्मन यानी मुश्रिकीन का क़ब्ज़ा हो गया था जैसा कि बुख़्ते-नस्र के हमले 587 ई० पू० और रूमा वालों के क़ब्ज़े (सन् 70 ई०) से ज़ाहिर है, लेकिन इसके ख़िलाफ़ काबा पर ईसाइयों को क़ब्ज़ा न मिल सका, हालांकि उस वक़्त यही मुसलमान थे और काबा के निवासी मुश्रिक थे।

फिर यह घटना ऐसी परिस्थितियों में घटित हुई कि इसकी ख़बर उस वक़्त के सभ्य जगत के अधिकतर क्षेत्रों (यानी रूम व फ़ारस के अधिकतर क्षेत्रों) में थोड़ी ही देर में पहुंच गयी, क्योंकि हब्शा का रूमियों से बड़ा गहरा ताल्लुक़ था और दूसरी ओर फ़ारसियों की नज़र रूमियों पर बराबर रहती थी और उनके मित्रों के साथ होने वाली घटनाओं का बराबर निरीक्षण करते रहते थे। यही वजह है कि इस घटना के बाद फ़ारस वालों ने बड़ी तेज़ी से यमन पर क़ब्ज़ा कर लिया। अब चूंकि यही दो राज्य उस वक्त सभ्य जगत के अहम हिस्से का प्रतिनिधित्व करते थे, इसलिए इस घटना की वजह से दुनिया की निगाहें ख़ाना-ए-काबा की ओर मुड़ गयीं। उन्हें बैतुल्लाह की महानता का एक खुला हुआ ख़ुदाई निशान दिखाई पड़ गया और यह बात दिलों में अच्छी तरह बैठ गई कि इस घर को अल्लाह ने अपनी पाकी बयान करने के लिए चुन लिया है, इसलिए आगे यहां की आबादी से किसी इंसान का नुबूवत के दावे के साथ उठना इस घटना के तक़ाज़े के ठीक मुताबिक़ होगा और अल्लाह की उस हिक्मत की तफ़्सीर (व्याख्या) होगा जो ईमान वालों के ख़िलाफ़ मुश्रिकों की मदद में छिपी हुई थी।

अब्दुल मुत्तलिब के कुल दस बेटे थे, जिनके नाम ये हैं------

1. हारिस, 2. ज़ुबैर, 3. अबू तालिब, 4. अब्दुल्लाह, 5. हमज़ा रज़ि० 6. अबू लहब, 7. ग़ैदाक़, 8. मुक़व्विम, 9. सफ़ार और 10. अब्बास रज़ि०।

कुछ कहते हैं ग्यारह थे एक का नाम क़सम था। और कुछ और लोगों ने कहा है कि 13 थे, एक का नाम अब्दुल काबा था और एक का नाम हजल था, लेकिन दस मानने वाले कहते हैं कि मुक़व्विम ही का दूसरा नाम अब्दुल काबा और ग़ैदाक था, दूसरा नाम हजल था और क़सम नाम का कोई आदमी अब्दुल मुत्तलिब की औलाद में न था-----

अब्दुल मुत्तलिब की बेटियां छः थीं। नाम ये हैं:

1. उम्मुल हकीम, इनका नाम बैज़ा है, 2. बर्रा, 3. आतिका, 4. सफ़िय्या, 5. अरवा और 6. उमैमा।[10]

3. अब्दुल्लाह------अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मान्य पिता:

इनकी मां का नाम फ़ातिमा था और वह अम्र बिन आइज़ बिन इम्रान बिन मख़्ज़ूम बिन यक़ज़ा बिन मुर्रा की बेटी थीं। अब्दुल मुत्तलिब की औलाद में अब्दुल्लाह सब से ज़्यादा ख़ूबसूरत, पाकदामन और चहेते थे और ज़बीह कहलाते थे। ज़बीह कहलाने की वजह यह थी कि जब अब्दुल मुत्तलिब के लड़कों की तायदाद पूरी दस हो गई और बचाव करने के लायक़ हो गए तो अब्दुल मुत्तलिब ने उन्हें अपनी नज़र (मन्नत) की सूचना दी। सब ने बात मान ली।

इसके बाद अब्दुल मुत्तलिब ने क़िस्मत के तीरों पर इन सब के नाम लिखे और हुबल के ज़िम्मेदार के हवाले किया। ज़िम्मेदार ने तीरों को हिला-डुला कर क़ुरआ निकाला तो अब्दुल्लाह का नाम निकला। अब्दुल मुत्तलिब ने अब्दुल्लाह का हाथ पकड़ा, छुरी ली और ज़िब्ह करने के लिए ख़ाना-ए-काबा के पास ले गए, लेकिन क़ुरैश और ख़ास तौर से अब्दुल्लाह के ननिहाल वाले यानी बनू मख़्ज़ूम और अब्दुल्लाह के भाई, अबू तालिब आड़े आए। अब्दुल मुत्तलिब ने कहा, अब मैं अपनी नज़र

10) तलक़ीहुल-फ़हूम 8,9 रहमतुल्लिल-आलमीन 2/56,66

का क्या करूं? उन्होंने मश्वरा दिया कि वह किसी अर्राफ़ा (जानकार) औरत के पास जाकर हल मालूम करें। अब्दुल मुत्तलिब एक अर्राफ़ा के पास गए। उसने कहा कि अ़ब्दुल्लाह और दस ऊंटों के दर्मियान कुरआ डालें। अगर अ़ब्दुल्लाह के नाम कुरआ निकले तो और दस ऊंट बढ़ा दें। इस तरह दस-दस ऊंट बढ़ाते जाएं और कुरआ डालते जाएं, यहां तक कि अल्लाह राज़ी हो जाए, फिर ऊंटों के नाम कुरआ निकल आए तो उन्हें ज़िब्ह कर दें। अब्दुल मुत्तलिब ने वापस आकर अ़ब्दुल्लाह और दस ऊंटों के दर्मियान कुरआ डाला, मगर कुरआ अ़ब्दुल्लाह के नाम निकला। इसके बाद वह दस-दस ऊंट बढ़ाते गए और कुरआ-अंदाज़ी करते गये मगर कुरआ अ़ब्दुल्लाह के नाम ही निकलता रहा। जब सौ ऊंट पूरे हो गये तो कुरआ ऊंटों के नाम निकला। अब अब्दुल मुत्तलिब ने उन्हें अ़ब्दुल्लाह के बदले ज़िब्ह किया और वहीं छोड़ दिया। किसी इंसान या दरिंदे के लिए कोई रुकावट न थी। इस वाक़िए से पहले क़ुरैश और अ़रब में ख़ूँबहा (दियत) की तायदाद दस ऊंट थी मगर इस वाक़िए के बाद सौ ऊंट कर दी गयी। इस्लाम ने भी इस तायदाद को बाक़ी रखा। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से आपका यह इर्शाद रिवायत किया गया है कि मैं दो ज़बीह की औलाद हूं—एक हज़रत इस्माईल अ़लैहिस्सलाम और दूसरे आप के वालिद अ़ब्दुल्लाह।"[11]

अब्दुल मुत्तलिब ने अपने बेटे अब्दुल्लाह की शादी के लिए हज़रत आमना को चुना, जो वहब बिन अ़ब्दे मुनाफ़ बिन ज़ोहरा बिन किलाब की सुपुत्री थीं और वंश और पद की दृष्टि से क़ुरैश की सबसे महान महिला समझी जाती थीं। उनके पिता वंश और पद दोनों हैसियत से बनू ज़ोहरा के सरदार थे। वह मक्का ही में विदा होकर हज़रत अब्दुल्लाह के पास आईं, पर थोड़े दिनों बाद अब्दुल्लाह को अब्दुल मुत्तलिब ने खजूर लाने के लिए मदीना भेजा और उनका वहीं देहान्त हो गया।

11) इब्ने हिशाम 1/151-155,रहमतुल-लिल-आलमीन 2/89-90, मुख़्तसर सीरतुर-रसुल 12,22-23

कुछ जीवनी लेखकों का कहना है कि वे व्यापार के लिए शाम देश गए थे। कुरैश के एक क़ाफ़िले के साथ वापस आकर बीमार होकर मदीना उतरे और वहीं मृत्यु हो गई। कफ़न दफ़न नाबिग़ा जादी के मकान में हुआ। उस वक़्त उनकी उम्र पच्चीस वर्ष की थी। अधिकतर इतिहासकारों के कहने के मुताबिक़ अभी अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पैदा नहीं हुए थे। अलबत्ता कुछ जीवनी-लेखकों का कहना है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का जन्म उनकी वफ़ात से दो माह पहले हो चुका था।[12] जब उनकी वफ़ात की ख़बर मक्का पहुंची तो हज़रत आमिना ने बड़ा दर्द भरा शोक गीत लिखा जो यह है—

عفا جانب البطحاء من ابن هاشم وجاور لحدا خار جافي الغماغم
دعته المنايا دعوة فاجابها وماتركت في الناس مثل ابن هاشم
عشية راحوا يحملون سريره تعاوره اصحابه في التزاحم
فان تك غالته المنايا و ريبها فقد كان معطاء كثير التراحم[13]

"बतहा की गोद हाशिम के बेटे से ख़ाली हो गई। वह शोर-शराबे के दर्मियान एक क़ब्र में सो गया। उसे मौत ने एक पुकार लगाई और उसने जवाब दे दिया। अब मौत ने लोगों में इब्ने हाशिम जैसा कोई इंसान नहीं छोड़ा (कितनी हसरतें भरी थीं) वह शाम, जब लोग उन्हें तख़्त पर उठाए ले जा रहे थे। अगर मौत और मौत की घटना ने उन का वजूद ख़त्म कर दिया है (तो उनके चरित्र के चिन्ह नहीं मिटाए जा सकते) वे बड़े समझदार और दयावान थे।"

अब्दुल्लाह का कुल तर्का (छोड़ा हुआ माल) यह था——

पांच ऊंट, बकरियों का एक रेवड़, एक हब्शी लौंडी जिनका नाम बरकत था और उपनाम उम्मे ऐमन। यही उम्मे ऐमन हैं जिन्होंने अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को गोद खिलाया था।[14]

12) इब्ने हिशाम 1/156,158, फ़िक़्हुस-सीरा (मु० ग़ज़ाली) 46, रहमतुल-लिल-आलमीन 2/91
13) तबक़ात इब्ने सअद 1/62
14) मुख़्तसरुस-सीरा (शेख़ अब्दुल्लाह) 12, तलक़ीहुल-फ़ुहूम 11, मुस्लिम 2/96

जन्म और पवित्र जीवन के चालीस साल

जन्म

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मक्का में शाबे बनी हाशिम के अंदर 9 रबीउल अव्वल सन् 01 आमुल फ़ील में सोमवार को पैदा हुए। उस वक़्त नौ-शेरवां के सिंहासन पर बैठने का चालीसवां साल था और 20 या 22 अप्रैल सन् 571 ई० की तारीख थी। अल्लामा मुहम्मद सुलैमान साहब सलमान मंसूरपुरी और महमूद पाशा फ़लकी की तहक़ीक़ यही है।[1]

इब्ने साद की रिवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मां ने फ़रमाया, "जब आप का जन्म हुआ तो मेरे शरीर से एक नूर निकला जिससे शाम देश के महल रोशन हो गए"। इमाम अहमद ने हज़रत इरबाज़ बिन सारिया से भी लगभग इसी विषय की रिवायत नक़्ल फ़रमायी है।[2]

---

1) तारीख़े ख़िज़री 1/62, रहमतुल-लिल-आलमीन 1/38-39, अप्रेल की तिथि में कलेन्डर की वजह से फ़र्क़ है।

2) मुख़्तसरुस-सीरा (शेख़ अब्दुल्लाह) 12, इब्ने सअद 1/63

कुछ रिवायतों में बताया गया है कि जन्म के वक़्त कुछ घटनाएं नुबूवत की शुरुआत के रूप में ज़ाहिर हुईं यानी किसरा के महल के चौदह कंगूरे गिर गए, मजूस का अग्नि-भंडार ठंडा हो गया। सादा समुद्र सूख गया और उसके गिरजे ढह गए। यह बैहक़ी की रिवायत है।[3] लेकिन मुहम्मद ग़ज़ाली ने इसको सही नहीं माना है।[4]

जन्म के बाद आपकी मां ने अ़ब्दुल मुत्तलिब के पास पोते की ख़ुशख़बरी भिजवायी, वह ख़ुशी-ख़ुशी तशरीफ़ लाए और आपको ख़ाना-ए-काबा में ले जाकर अल्लाह से दुआ़ की, उसका शुक्र अदा किया और नाम मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) तज्वीज़ किया। यह नाम अ़रब के चलन में न था। फिर अ़रब रिवाज के मुताबिक़ सातवें दिन ख़त्ना किया।[5]

आपको आपकी मां के बाद सबसे पहले अबू लहब की लौंडी सुवैबा ने दूध पिलाया। उस वक़्त उसकी गोद में जो बच्चा था, उसका नाम मस्रूह था। सुवैबा ने आपसे पहले हज़रत हमज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब को और आपके बाद अबू सलमा बिन अब्दुल असद मख़्ज़ूमी को भी दूध पिलाया था।[6]

बनी साद में

अरब के शहरों के निवासियों का तरीक़ा था कि वे अपने बच्चों को शहरों के रोगों से दूर रखने के लिए दूध पिलाने वाली बदवी औरतों के हवाले कर दिया करते थे ताकि उनके शरीर शक्तिशाली और अंग

---

3) मुख़्तसरुस-सीरा (शेख़ अब्दुल्लाह) 12,

4) फ़िक़हुस-सीरा मु० ग़ज़ाली 46

5) इब्ने हिशाम 1/159-160, तारीख़े ख़िज़री 1/62, एक कथन यह भी है कि आप मख़्तून (ख़तना किए हुए) पैदा हुए थे देखिए (तलक़ीहुल-फ़ुहूम 4) मगर इब्ने क़य्यिम कहते हैं कि इस विषय में कोई सही हदीस नहीं है (देखिए ज़ादुल-मआद 1/18)

6) तलक़ीहुल-फ़ुहूम 4, मुख़्तसरुस-सीरा (शेख़ अब्दुल्लाह)13

मज़बूत हों और अपने पालने ही से शुद्ध और ठोस अरबी भाषा सीख लें। इसी चलन के मुताबिक़ अब्दुल मुत्तलिब ने दूध पिलाने वाली दाई खोजी और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हज़रत हलीमा बिन्त अबी ज़ुवैब के हवाले किया। यह क़बीला बनी साद बिन बक्र की एक महिला थीं। इनके पति का नाम हारिस बिन अब्दुल उज़्ज़ा और कुन्नियत अबू कब्शा थी और वह भी क़बीला बनी साद ही से ताल्लुक़ रखते थे।

हारिस की सन्तान के नाम ये हैं जो दूध पीने के ताल्लुक़ से अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के भाई बहन थे----- अब्दुल्लाह, उनैसा, हुज़ाफ़ा या जुज़ामा इन्हीं की उपाधि (लक़ब) शैमा थी। और इसी नाम से वे ज़्यादा मशहूर हुईं। यह अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को गोद खिलाया करती थीं। इनके अलावा अबू सुफ़ियान बिन हारिस बिन अब्दुल मुत्तलिब जो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचेरे भाई थे, वह भी हज़रत हलीमा रज़ि० के वास्ते से आपके दूध-शरीक भाई थे। आपके चचा हज़रत हमज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब रज़ि० भी दूध पिलाने के लिए बनू साद की एक औरत के सुपुर्द किए गए थे। उस औरत ने भी एक दिन जब अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हज़रत हलीमा रज़ि० के पास थे, आपको दूध पिला दिया। इस तरह आप और हज़रत हमज़ा रज़ि० दोहरे दूध-शरीक भाई हो गए। एक सुवैबा के ताल्लुक़ से और दूसरे बनू साद की इस औरत के ताल्लुक़ से।[7]

दूध पिलाने के दौरान हज़रत हलीमा रज़ि० ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बरकत के ऐसे-ऐसे दृश्य देखे कि पूरी तरह अचंभे में पड़ गईं। विस्तृत विवरण उन्हीं के मुख से सुनिए---- इब्ने इस्हाक़ कहते हैं कि हज़रत हलीमा रज़ि० बयान किया करती थीं कि वह अपने

7) ज़ादुल-मआद 1/19

शौहर के साथ अपना एक छोटा सा दूध पीता बच्चा लेकर बनी सअ़द की कुछ औरतों के क़ाफ़िले में अपने शहर से बाहर दूध पीने वाले बच्चों की तलाश में निकलीं। यह अकाल के दिन थे और अकाल ने कुछ बाक़ी न छोड़ा था। मैं अपनी एक सफ़ेद गधी पर सवार थी और हमारे पास एक ऊंटनी भी थी, लेकिन क़सम है ख़ुदा की, उससे एक बूंद दूध न निकलता था, इधर भूख से बच्चा इतना बिलखता था कि हम रात भर सो नहीं सकते थे। न मेरे सीने में बच्चे के लिए कुछ था, न ऊंटनी उसका भोजन दे सकती थी, बस हम वर्षा और ख़ुशहाली की आशा किए बैठे थे। मैं अपनी गधी पर सवार होकर चली तो वह कमज़ोर और दुबलेपन की वजह से इतनी सुस्त रफ़्तार निकली कि पूरा क़ाफ़िला तंग आ गया। ख़ैर, हम किसी न किसी तरह दूध पीने वाले बच्चों की खोज में मक्का पहुंच गए। फिर हम में से कोई औरत ऐसी नहीं थी जिस पर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पेश न किया गया हो, मगर जब उसे बताया जाता कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यतीम हैं तो वह आपको लेने के इंकार कर देती, क्योंकि हम बच्चे के बाप से ही कुछ पाने की उम्मीद रखते थे। हम कहते, यह तो यतीम है, भला इसकी विधवा मां और इसके दादा क्या दे सकते हैं, बस यही वजह थी कि हम आपको लेना नहीं चाहते थे।

इधर जितनी औरतें मेरे साथ आयी थीं, सबको कोई न कोई बच्चा मिल गया, सिर्फ़ मुझ ही को न मिल सका। जब वापसी की बारी आयी तो मैंने अपने पति से कहा, ख़ुदा की क़सम! मुझे अच्छा नहीं लगता कि मेरी सारी सहेलियां तो बच्चे ले-ले कर जाएं और अकेली मैं कोई बच्चा लिए बिना वापस जाऊं। मैं जाकर इसी यतीम बच्चे को ले लेती हूं। शौहर ने कहा, कोई हरज नहीं, मुम्किन है अल्लाह इसी में हमारे लिए बरकत दे। इसके बाद मैंने जाकर बच्चा ले लिया और सिर्फ़ इस वजह से ले लिया कि कोई और बच्चा न मिल सका।

हज़रत हलीमा रज़ि० कहती हैं कि जब मैं बच्चों को लेकर अपने डेरे पर वापस आई तो उसे अपनी गोद में रखा, तो उसने जितना चाहा, दोनों सीने दूध के साथ उस पर उमड़ पड़े और उसने पेट भर कर पिया। इसके साथ इसके भाई ने भी पेट भर कर पिया, फिर दोनों सो गए, हालांकि इससे पहले हम अपने बच्चे के साथ सो नहीं सकते थे। इधर मेरे शौहर ऊंटनी दूहने गए तो देखा कि उसका थन दूध से भरा है। उन्होंने इतना दूध दूहा कि हम दोनों ने जी भर कर पिया और बड़े आराम से रात गुज़ारी। उनका बयान है कि सुबह हुई तो मेरे शौहर ने कहा, हलीमा! ख़ुदा की क़सम! तुम ने एक बरकत वाली रूह हासिल की है, मैंने कहा, मुझे भी यही उम्मीद है।

हलीमा रज़ि० कहती हैं कि इसके बाद हमारा क़ाफ़िला रवाना हुआ। मैं अपनी उस कमज़ोर गधी पर सवार हुई और उस बच्चे को भी अपने साथ लिया, लेकिन अब वही गधी ख़ुदा की क़सम! पूरे क़ाफ़िले को काट कर इस तरह आगे निकल गयी कि कोई गधा उसका साथ न पकड़ सका, यहां तक कि मेरी सहेलियां मुझ से कहने लगीं, 'ओ अबू ज़ुवैब की बेटी! अरे! यह क्या है? ज़रा हम पर मेहरबानी कर। आख़िर यह तेरी वही गधी तो है जिस पर तू सवार होकर आई थी? मैं कहती, हां! हां! ख़ुदा की क़सम! यह वही है। वे कहतीं, इसका यक़ीनी तौर पर कोई ख़ास मामला है।

फिर हम बनू साद में अपने घरों को आ गए। मुझे मालूम नहीं कि अल्लाह की धरती का कोई भाग हमारे इलाक़े से ज़्यादा अकाल-ग्रस्त था, लेकिन हमारी वापसी के बाद मेरी बकरियां चरने जातीं तो पेट भरी और दूध से भरपूर वापस आतीं। हम दूहते और पीते, जबकि किसी और इंसान को दूध की एक बूंद भी न मिलती। इनके जानवरों के थनों में दूध सिरे से रहता ही न था, यहां तक कि हमारी क़ौम के नागरिक अपने चारवाहों से कहते कि कमबख़्तों! जानवर वहीं चराने ले जाया करो, जहां

अबू जुवैब की बेटी का चरवाहा ले जाता है---लेकिन तब भी उनकी बकरियां भूखी वापस आतीं, उनके अंदर एक बूंद दूध न रहता, जबकि मेरी बकरियां पेट भर खा कर और दूध से भरपूर पलटतीं। इस तरह हम अल्लाह की ओर से बराबर बढ़ौतरी और ख़ैर को देखते रहे, यहां तक कि उस बच्चे के दो साल पूरे हो गए और मैंने दूध छुड़ा दिया। यह बच्चा दूसरे बच्चों के मुक़ाबले में इस तरह बढ़ रहा था कि दो साल पूरे होते-होते वह कड़ा और गठीला हो गया। इसके बाद हम उस बच्चे को उसकी मां के पास ले गए, लेकिन हम जो उसकी बरकत देखते आए थे, उसकी वजह से हमारी बड़ी ख़्वाहिश यही थी कि वह हमारे पास रहे। चुनांचे हमने उसकी मां से बात की। मैंने कहा, क्यों न आप अपने बच्चे को मेरे पास ही रहने दें कि ज़रा मज़बूत हो जाए, क्योंकि मुझे उसके बारे में मक्का की वबा का ख़तरा है। ग़रज़ हमारे बराबर कहने पर उन्होंने हमें वापस दे दिया।[8]

सीने के चाक होने की घटना

इस तरह अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दूध पीने की मुद्दत ख़त्म होने के बाद भी बनू साद ही में रहे, यहां तक कि जन्म के चौथे या पांचवे साल[9] सीने के चाक किए जाने की घटना घटी। इसका पूरा विवरण हज़रत अनस की सहीह मुस्लिम में रिवायत किया गया है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम तशरीफ़ लाए। आप बच्चों के साथ खेल रहे थे। हज़रत जिब्रील अलैहि० ने आपको पकड़ कर लिटाया और सीना चाक करके दिल निकाला, फिर दिल से एक लोथड़ा निकाल कर फ़रमाया, यह तुम से शैतान का हिस्सा है, फिर दिल को एक तश्त (प्लेट) में ज़मज़म

8) इब्ने हिशाम 1/162-164

9) अधिकतर सीरत लिखने वालों का यही कथन है लेकिन इब्ने इसहाक की रिवायत से पता चलता है कि यह घटना तीसरे साल की है देखिए इब्ने हिशाम 1/164-165

के पानी से धोया और फिर उसे जोड़ कर उसकी जगह लौटा दिया, इधर बच्चे दौड़ कर आपकी मां यानी दाई हलीमा के पास पहुंचे और कहने लगे मुहम्मद को क़त्ल कर दिया गया, उनके घर के लोग तुरंत पहुंचे, देखा तो आपका रंग उतरा हुआ था।[10]

मां की मुहब्बत भरी गोद में

इस घटना के बाद हलीमा को ख़तरा महसूस हुआ और उन्होंने आपको आपकी मां के हवाले कर दिया, चुनांचे आप छः साल की उम्र तक मां ही की मुहब्बत भरी गोद में रहे।[11]

उधर हज़रत आमना का इरादा हुआ कि मृत (मरे हुए) पति की याद में यसरिब जाकर उनकी क़ब्र की ज़ियारत करें। चुनांचे वह अपने यतीम बच्चे मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, अपनी सेविका उम्मे ऐमन और अपने अभिभावक अब्दुल मुत्तलिब के साथ कोई पांच सौ किलोमीटर की दूरी तय करके मदीना तशरीफ़ ले गयीं और वहां एक महीने तक क़ियाम करके वापस हुईं, लेकिन अभी शुरू रास्ते ही में थीं कि बीमारी ने आ लिया। फिर यह बीमारी तेज़ी पकड़ती गयी, यहां तक कि मक्का और मदीना के बीच अब्वा नामी जगह पर पहुंच कर इस दुनिया से चली गयीं।[12]

दादा की मुहब्बत की छाया तले

बूढ़े अब्दुल मुत्तलिब अपने पोते को लेकर मक्का पहुंचे। उनका दिल अपने इस यतीम पोते की मुहब्बत में तप रहा था, क्योंकि अब उसे एक नया चरका लगा था जिसने पुराने घाव कुरेद दिए थे। अब्दुल मुत्तलिब की भावनाओं में पोते के लिए ऐसी नम्रता थी कि उनकी ख़ास अपनी संतानों में से भी किसी के लिए ऐसी नम्रता न थी। चुनांचे भाग्य

10) मुस्लिम बाबुल-इसरा 1/92

11) तलकीहुल-फ़ुहूम 7, इब्ने हिशाम 1/168

12) इब्ने हिशाम 1/168, तलकीहुल-फ़ुहूम 7, तारीखे ख़िज़री 1/63, फ़िक़्हुस-सीरा ग़ज़ाली 50

ने आप को अकेलेपन के जिस वीराने में ला खड़ा किया था, अब्दुल मुत्तलिब उसमें आपको अकेले छोड़ने के लिए तैयार न थे, बल्कि आपको अपनी औलाद से भी बढ़कर चाहते और बड़ों की तरह उनका आदर करते थे। इब्ने हिशाम का बयान है कि अब्दुल मुत्तलिब के लिए ख़ाना-ए-काबा के साए में फ़र्श बिछाया जाता, उनके सारे लड़के फ़र्श के चारों ओर बैठ जाते अब्दुल मुत्तलिब तशरीफ़ लाते तो फ़र्श पर बैठते। उनके बड़कपन को देखते हुए उनका कोई लड़का फ़र्श पर न बैठता, लेकिन अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाते तो फ़र्श ही पर बैठ जाते। अभी आप कम उम्र बच्चे थे। आपके चचा लोग आप को पकड़ कर उतार देते, लेकिन जब अब्दुल मुत्तलिब उन्हें ऐसा करते देखते, तो फ़रमाते, मेरे इस बेटे को छोड़ दो, ख़ुदा की क़सम! इसकी शान निराली है, फिर उन्हें अपने साथ अपने फ़र्श पर बिठा लेते, अपने हाथ से पीठ सहलाते और उनके चलने-फिरने को देख कर ख़ुश होते।[13]

आपकी उम्र अभी 8 साल दो महीने दस दिन की हुई थी कि दादा अब्दुल मुत्तलिब की मुहब्बत का साया उठ गया। उनका इंतिक़ाल मक्का में हुआ और वह वफ़ात से पहले आपके चचा अबू तालिब को----जो आपके वालिद अब्दुल्लाह के सगे भाई थे, आप को पालने और देख-रेख करने की वसीयत कर गये थे।[14]

मेहरबान चाचा की देख-रेख में

अबू तालिब ने अपने भतीजे को पालने-पोसने का हक़ बड़ी ख़ूबी से अदा किया। आपको अपनी औलाद में शामिल किया, बल्कि उनसे भी बढ़ कर माना। और ज़्यादा मान-सम्मान दिया। चालीस साल से ज़्यादा मुद्दत तक ताक़त पहुंचाई, अपनी हिमायत का साया फैलाए रखा

13) इब्ने हिशाम 1/168

14) तलक़ीहुल-फ़ुहूम 7, इब्ने हिशम 1/149

और आप ही की बुनियाद पर दोस्ती और दुश्मनी की। अधिक व्याख्या अपनी जगह आ रही है।

मुबारक चेहरे से वर्षा की तलब

इब्ने असाकिर ने जलहमा बिन अरफ़ता से रिवायत किया है कि मैं मक्का आया। लोग अकाल के शिकार थे। क़ुरैश ने कहा। अबू तालिब! घाटी अकाल का शिकार है, बाल-बच्चे अकाल के निशाने पर हैं, चलिए वर्षा की दुआ कीजिए। अबू तालिब एक बच्चा साथ लेकर निकले। बच्चा बादलों से ढका हुआ सूरज मालूम होता था, जिससे घना बादल अभी-अभी छटा हो। इसके आस-पास और भी बच्चे थे। अबू तालिब ने उस बच्चे का हाथ पकड़ कर उसकी पीठ काबा की दीवार से टेक दी। बच्चे ने उनकी उंगली पकड़ रखी थी। उस वक़्त आसमान पर बादल का एक टुकड़ा न था, लेकिन (देखते-देखते) इधर-उधर से बादल आना शुरू हुए और ऐसी धुआं-धाड़ वर्षा हुई कि घाटी में बाढ़ आ गई और शहर व वीराने हरे-भरे हो गए। बाद में अबू तालिब ने इसी घटना की ओर संकेत करते हुए मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का गुणगान करते हुए कहा था---

وابيض يُسْتَسْقَى الغمامُ بوجهه ثِمَالُ الْيَتَامَىٰ عِصْمَةٌ لِلاَرَامِلِ[15]

"वह सुन्दर हैं, उनके चेहरे से वर्षा की कृपा तलब की जाती है, यतीमों की पनाहगाह और विधवाओं के रक्षक हैं"

बुहैरा राहिब (सन्यासी)

कुछ रिवायतों के मुताबिक़-----जिनकी सनद (प्रमाणिकता) में सन्देह है---जब आप की उम्र बारह वर्ष और एक कथन के अनुसार बारह वर्ष दो महीने दस दिन[16] की हो गयी तो अबू तालिब आप को

15) मुख़तसरुस-सीरा (शेख़ अब्दुल्लाह) 15-16

16) यह बात इब्ने जौज़ी ने तलक़ीहुल-फ़ुहूम 7 कही है

साथ लेकर व्यापार के लिए शाम देश की यात्रा पर निकले और बसरा पहुंचे। बसरा शाम की एक जगह और हूरान का केन्द्रीय नगर है। उस वक़्त यह अरब प्रायद्वीप के रूमी क़ब्ज़े वाले इलाक़ों की राजधानी थी। इस शहर में जिर्जीस नामक एक पादरी रहता था जो बुहैरा की उपाधि (लक़ब) से जाना जाता था। जब क़ाफ़िले ने वहां पड़ाव डाला तो यह सन्यासी अपने गिरजा से निकल कर क़ाफ़िले के भीतर आया, और उसे मेहमान बनाया, हालांकि इससे पहले वह कभी नहीं निकलता था। उसने अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को आपके गुणों की बुनियाद पर पहचान लिया और आप का हाथ पकड़ कर कहा---- 'यह सैयदुल आलमीन (पूरी दुनिया के सरदार) हैं अल्लाह इन्हें रहमतुल-लिल-आलमीन (दुनिया के लिए रहमत) बना कर भेजेगा।' अबू तालिब ने कहा, आप को यह कैसे मालूम हुआ? उसने कहा, "तुम लोग जब घाटी के इस ओर ज़ाहिर हुए तो कोई भी पेड़ या पत्थर ऐसा नहीं था, जो सज्दा के लिए झुक न गया हो और ये चीज़ें नबी के अलावा किसी और को सज्दा नहीं करतीं। फिर मैं उन्हें नुबूवत की मोहर से पहचानता हूं जो कंधे के नीचे कुर्री (नर्म हड्डी) के पास सेब की तरह है और हम इन्हें अपनी किताबों में भी पाते हैं।--------"

इसके बाद बुहैरा पादरी ने अबू तालिब से कहा कि इन्हें वापस कर दो, शाम देश न ले जाओ, क्योंकि यहूदियों से ख़तरा है। इस पर अबू तालिब ने कुछ गुलामों (दासों) के साथ आप को मक्का मुकर्रमा वापस भेज दिया।[17]

---

17) मुख़्तसरुस-सीरा (शैख़ अब्दुल्लाह)19, इब्ने हिशाम 1/180 183, तिरमिज़ी आदि की रिवायत में है कि आप को हज़रत बिलाल के साथ रवाना किया गया लेकिन यह ग़लत है क्योंकि उस वक़्त बिलाल शायद पैदा भी नहीं हुए थे और अगर पैदा थे भी तो अबू तालिब या अबू बक्र के साथ न थे ज़ादुल-मआद 1/17

फ़ुज्जार की लड़ाई

आप की उम्र 15 वर्ष की हुई तो फ़ुज्जार की लड़ाई हुई। इस लड़ाई में एक ओर कुरैश और उनके साथ बनू कनाना थे और दूसरी ओर क़ैस ऐलान थे। कुरैश और कनाना का कमांडर हर्ब बिन उमैया था, क्योंकि वह अपनी उम्र और बुज़ुर्गी की वजह से कुरैश व कनाना के नज़दीक बड़ा दर्जा रखता था। पहले पहर कनाना पर क़ैस का पल्ला भारी था, लेकिन दोपहर होते-होते क़ैस पर कनाना का पल्ला भारी हो गया। इसे हर्बे फ़ुज्जार इसलिए कहते हैं कि इसमें हरम और हराम महीने दोनों की हुर्मत (मान-सम्मान) ख़त्म की गई। इस लड़ाई में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भी तशरीफ़ ले गए थे और अपने चचाओं को तीर थमाते थे।[18]

हिलफ़ुल फ़ुज़ूल

इस लड़ाई के बाद एक हुर्मत वाले महीने ज़ीक़ादः में हिलफ़ुल फ़ुज़ूल की लड़ाई हुई। कुरैश के कुछ क़बीले यानी बनी हाशिम, बनी मुत्तलिब, बनी असद बिन अब्दुल उज़्ज़ा, बनी ज़ोहरा बिन किलाब और बनी तैम बिन मुर्रा ने इसका एहतिमाम किया।

ये लोग अब्दुल्लाह बिन जुदआन तैमी के मकान पर जमा हुए। क्योंकि वह उम्र और बुज़ुर्गी में आगे था-----और आपस में समझौता किया कि मक्का में जो भी मज़लूम नज़र आएगा, चाहे मक्के का रहने वाला हो या कहीं और का, ये सब उसकी मदद और हिमायत में उठ खड़े होंगे और उसका हक़ दिला कर रहेगें। इस मीटिंग में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भी तशरीफ़ रखते थे और रसूल होने के बाद फ़रमाया करते थे, मैं अब्दुल्लाह बिन जुदआन के मकान पर एक ऐसे समझौते में शरीक था कि मुझे उसके बदले में लाल ऊंट भी लेना

18) इब्ने हिशाम 1/184-185, क़ल्बु जज़ीरतिल-अरब 300, तारीख़े ख़िज़री 1/58

पसंद नहीं और अगर इस्लाम (के ज़माने में) इस समझौते के लिए बुलाया जाता तो मैं लपक कर जाता।[19]

इस समझौते की आत्मा पक्षपात की तह से उठने वाली अज्ञानता भरी हिमायत के विपरीत थी। इस समझौते की वजह यह बतायी जाती है कि ज़ुबैद का एक आदमी सामान लेकर मक्का आया और आ़स बिन वाइल ने उससे सामान ख़रीदा, लेकिन उसका हक़ रोक लिया। उसने मित्र क़बीलों अब्दुद्दार, मख़्ज़ूम, जम्ह, सहम और अ़दी से मदद का निवेदन किया, लेकिन किसी ने तवज्जोह न दी। इसके बाद उसने जबले अबू क़ुबैस पर चढ़ कर ऊंची आवाज़ से कुछ पद्य पढ़े, जिनमें उसने अपने ऊपर किये जा रहे ज़ुल्म की दास्तान बयान की थी। इस पर ज़ुबैर बिन अ़ब्दुल मुत्तलिब ने दौड़-धूप की और कहा कि यह आदमी बे-यार व मददगार क्यों है? इनकी कोशिश से ऊपर बताए गए क़बीले जमा हो गये, पहले समझौता हुआ और फिर आ़स बिन वाइल से उस ज़ुबैदी का हक़ दिलाया।[20]

मेहनत की ज़िंदगी

जवानी में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का कोई निश्चित काम न था, अलबत्ता यह ख़बर सहीह है कि आप बकरियां चराते थे। आपने बनी साद की बकरियां चरायीं[21] और मक्का में भी मक्का वालों की बकरियां कुछ क़ीरात के बदले चराते थे।[22] पच्चीस साल की उम्र हुई तो हज़रत ख़दीजा रज़ि० का माल लेकर व्यापार के लिए शाम देश तशरीफ़ ले गए।

---

19) इब्ने हिशाम 1/133, 135, मुख़्तसरुस सीरा (शेख़ अब्दुल्लाह) 30, 31

20) मुख़्तसरुस-सीरा (शेख़ अब्दुल्लाह) 30/31

21) इब्ने हिशाम 1/166

22) बुख़ारी-अल-इजारात बाबु रअ़ल-ग़नम अलल क़रारीत 1/301

इब्ने इस्हाक़ का बयान है कि ख़दीजा बिन्त ख़ुवैलिद एक प्रतिष्ठित, मालदार और व्यापारी महिला थीं। लोगों को अपना माल व्यापार के लिए देती थीं और शिकरत के उसूल पर एक हिस्सा तय कर लेती थीं क़ुरैश का पूरा क़बीला ही व्यापार करता था। जब उन्हें अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सच्चाई, अमानतदारी और अच्छे चरित्र का ज्ञान हुआ, तो उन्होंने एक संदेश द्वारा पेशकश (प्रस्ताव) की कि आप उनका माल लेकर व्यापार के लिए उनके दास मैसरा के साथ शाम देश तशरीफ़ ले जाएं। वह दूसरे व्यापारियों को जो कुछ देती हैं, इससे बेहतर और ज़्यादा मुआवज़ा आपको देंगी। आपने मान लिया और उनका माल लेकर उनके दास मैसरा के साथ शाम देश तशरीफ़ ले गए।[23]

हज़रत ख़दीजा रज़ि० से शादी

जब आप वापस मक्का तशरीफ़ लाए और हज़रत ख़दीजा रज़ि० ने अपने माल में ऐसी अमानत और बरकत देखी जो इससे पहले कभी न देखी थी और इधर उनके दास मैसरा ने आपके मीठे अख़्लाक़, ऊंचे किरदार, मुनासिब सोच, सच्चाई और अमानतदारी के तौर-तरीक़ों के बारे में अपनी देखी हुई बातें बयान कीं तो हज़रत ख़दीजा को अपना खोया हुआ मतलूब (वांछित) मोती मिल गया——उससे पहले बड़े-बड़े सरदार और रईस उनसे शादी करना चाहते थे, लेकिन उन्होंने किसी का पैग़ाम मंज़ूर न किया था। उन्होंने अपने दिल की बात अपनी सहेली नफ़ीसा बिन्त मुनब्बह से कही और नफ़ीसा ने जाकर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बात की। आप राज़ी हो गए और अपने चचाओं से इस मामले में बात की। उन्होंने हज़रत ख़दीजा रज़ि० के चचा से बात की और शादी का पैग़ाम दिया। इसके बाद शादी हो गई। निकाह में बनी हाशिम और मुज़र के सरदार शरीक हुए———

23) इब्ने हिशाम 1/187-188

यह शाम देश से वापसी के दो महीने बाद की बात है। आपने महर में बीस ऊंट दिए। उस वक़्त हज़रत ख़दीजा रज़ि० की उम्र चालीस साल थी और वह वंश और धन और सूझ-बूझ की दृष्टि से अपनी क़ौम की सब से ज़्यादा प्रतिष्ठित और महान महिला थीं। यह पहली महिला थीं जिनसे अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने शादी की और उनके देहान्त तक किसी दूसरी महिला से शादी नहीं की।[24]

इब्राहीम के अलावा अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बाक़ी तमाम औलाद उन ही के पेट से थीं। सब से पहले क़ासिम पैदा हुए और उन्ही के नाम पर आप का उपनाम अबुल क़ासिम पड़ा फिर ज़ैनब, रूक़ैया, उम्मे कुलसूम, फ़ातिमा और अब्दुल्लाह रज़ि० पैदा हुए। अब्दुल्लाह का उपनाम तैयब और ताहिर था। आपके सब बच्चों की बचपन ही में मृत्यु हो गयी, अलबत्ता बच्चियों में से हर एक ने इस्लाम का ज़माना पाया, मुसलमान हुईं और हिजरत फ़रमायी, लेकिन हज़रत फ़ातिमा रज़ि० के सिवा बाक़ी सबका इंतिक़ाल आपकी ज़िंदगी ही में हो गया। हज़रत फ़ातिमा रज़ि० की मृत्यु आपके देहावसान के छः महीने बाद हुई।[25]

कअ़बे का निर्माण और हजरे अस्वद के झगड़े का फ़ैसला

आपकी उम्र का पैंतीसवां साल था। क़ुरैश ने नये सिरे से ख़ा-न-ए काबा को बनवाया। वजह यह थी कि काबा सिर्फ़ क़द से कुछ ऊंची चहार दीवारी की शक्ल में था। हज़रत इस्माईल अलैहि० के समय ही से उसकी ऊंचाई नौ हाथ की थी और उस पर छत न थी। इस स्थिति का फ़ायदा उठाते हुए कुछ चोरों ने उसके अंदर रखा हुआ ख़ज़ाना चुरा लिया------इसके अलावा उसको बने हुए एक लम्बा समय बीत चुका

---

24) इब्ने हिशाम 1/189-190, फ़िक़्हुस-सीरा 59, तल्क़ीहुल-फ़ुहूम 7

25) इब्ने हिशाम 1/190-191, फ़िक़्हुस-सीरा 60, फ़तहुल-बारी7/105 इतिहास की किताबों में मतभेद है मुझे जो सही लगा वही मैंने लिखा है

था। इमारत टूट-फूट का शिकार थी और दीवारें फट गई थीं। इधर उसी साल एक ज़ोरदार बाढ़ आई, जिसके बहाव का रुख़ ख़ा-न-ए काबा की ओर था। इसके नतीजे में ख़ा-न-ए काबा किसी भी क्षण ढह सकता था। इसलिए क़ुरैश मजबूर हो गये कि उसका दर्जा और पोज़ीशन बाक़ी रखने के लिए उसे नए सिरे से बनाएं।

इस मरहले पर क़ुरैश ने मिल कर फ़ैसला किया कि ख़ा-न-ए काबा के बनाने में सिर्फ़ हलाल रक़म ही इस्तेमाल करेंगे। उसमें रंडी की उजरत (मुआवज़ा), सूद की दौलत और किसी का नाहक़ लिया हुआ माल इस्तेमाल नहीं होने देंगे।

नए निर्माण के लिए पुरानी इमारत को ढाना ज़रूरी था, लेकिन किसी को ढाने की हिम्मत नहीं होती थी, आखिर में वलीद बिन मुग़ीरह मख़्ज़ूमी ने शुरूआत की। जब लोगों ने देखा कि उस पर कोई आफ़त नहीं टूटी तो बाक़ी लोगों ने भी ढाना शुरू किया जब इब्राहीम की बुनियादों तक ढा चुके तो बनाने की शुरूआत की। बनाने के लिए अलग-अलग क़बीले का हिस्सा मुक़र्रर था और हर क़बीले ने अलग अलग पत्थरों के ढेर लगा रखे थे। निर्माण-कार्य शुरू हुआ। बाक़ूम नामी एक रूमी निर्माण करने वाला निगराँ था, जब इमारत हजरे अस्वद (काले पत्थर) तक उठ चुकी तो यह झगड़ा उठ खड़ा हुआ कि हजरे अस्वद को इस की जगह रखने का सोभाग्य किसे प्राप्त हो। यह झगड़ा चार पांच दिन तक जारी रहा और धीरे-धीरे इतना बढ़ गया कि लगता था कि हरम भू-भाग में ज़बरदस्त ख़ून-ख़राबा हो जाएगा, लेकिन अबू उमैया मख़्ज़ूमी ने यह कह कर फ़ैसले की एक शक्ल पैदा कर दी कि मस्जिदे हराम के दरवाज़े से दूसरे दिन जो आदमी सब से पहले दाख़िल हो, उसे अपने झगड़े का सरपंच मान लें। लोगों ने यह प्रस्ताव मान लिया। अल्लाह की मर्ज़ी कि इसके बाद सब से पहले अल्लाह के रसूल सल्लल्लाह अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाए। लोगों ने आप को देखा, तो चीख पड़े:

(अकेलापन) प्रिय हो गई। चुनांचे आप हिरा की गुफा में चले जाते और कई-कई रात घर तशरीफ़ लाए बिना इबादत में लगे रहते। इसके लिए आप खाने-पीने का सामान ले जाते। (फिर सामान ख़त्म होने पर) हज़रत ख़दीजा रज़ि० के पास वापस आते और लगभग उतने ही दिनों के लिए फिर सामान ले जाते, यहां तक कि आपके पास हक़ (वह्य) आया और आप गुफ़ा में थे, यानी आपके पास फ़रिश्ता आया और उसने कहा, पढ़ो, आपने फ़रमाया, मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं। आप फ़रमाते हैं कि इस पर उसने मुझे पकड़ कर इस ज़ोर से दबाया कि मेरी ताक़त निचोड़ दी, फिर छोड़ कर कहा, पढ़ो, मैंने कहा, मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं। उसने दोबारा पकड़ कर दबोचा, फिर छोड़ कर कहा, पढ़ो। मैंने फिर कहा, मैं पढ़ा हुआ नहीं हूं। उसने तीसरी बार पकड़ कर दबोचा, फिर छोड़ कर कहा——

اِقْرَأْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِىْ خَلَقَ خَلَقَ الْاِنْسَانَ مِنْ عَلَقٍ اِقْرَأْ وَرَبُّكَ الْاَكْرَمُ [5]

"पढ़ो अपने रब के नाम से जिसने पैदा किया इंसान को लोथड़े से, पढ़ो और तुम्हारा रब बड़े करम वाला है।"

इन आयतों के साथ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पलटे। आपका दिल धक-धक कर रहा था, हज़रत ख़दीजा बिन्ते खुवैलिद रज़ि० के पास तशरीफ़ लाए और फ़रमाया, मुझे चादर ओढ़ा दो, मुझे चादर ओढ़ा दो। उन्होंने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को चादर ओढ़ा दी, यहां तक कि डर जाता रहा।

इसके बाद आपने हज़रत ख़दीजा रज़ि० को घटना की सूचना देते हुए फ़रमाया, यह मुझे क्या हो गया है? मुझे तो अपनी जान का डर लगता है। हज़रत ख़दीजा रज़ि० ने कहा, क़तई तौर पर नहीं, ख़ुदा की क़सम! अल्लाह आपको रुसवा न करेगा। आप रिश्तों को जोड़ते हैं,

5) आयतें عَلَّمَ الْاِنْسَانَ مَا لَمْ يَعْلَمْ तक उतरीं